वेदान्त सागर

==========

लेखक

समर्थ गुरु परम सन्त महात्मा रामचन्द्र जी महाराज

निवासी फतेहगढ़, प्रान्त फर्रुखाबाद

वेदान्त सागर

लेखक

समर्थ गुरु परम सन्त

महात्मा रामचंद्र जी महाराज

प्रकाशक

अखिलेश कुमार

तलैया लेन। फतेहगढ़

प्रथम बार

१०००

सर्वाधिकार सुरक्षित

मार्च १९६४

मूल्य

एक रुपया

डिजिटल संस्करण -२०१९

रामाश्रम सत्संग (रजि।) ग़ाज़ियाबाद

९- रामाकृष्ण कॉलोनी , जी। टी। रोड,

ग़ाज़ियाबाद

ॐ

संक्षिप्त जीवनी

समर्थ गुरु महात्मा रामचंद्र जी महाराज

"बन्दौं गुरु पद कंज, कृपा सिन्धु नर रूप हरि

महा मोह तम पुँज, जासु वचन रविकर निकर"

जन्म, कुल, स्थान इत्यादि :-

चौधरी कायस्थ वंश के उच्च कुल का प्राचीन स्थान क़स्बा भूमिग्राम जिला मैनपुरी में आबाद है। इस कुल के पूर्वज श्री वृन्दावन आजान वाहू को मुग़लिया सल्तनत के मुग़ल सम्राट अकबर ने आपकी उत्तम योग्यता तथा वीरता के उपलक्ष्य में चौधरी की उपाधि मय राजसी वस्त्र व ५५५ गांव का इलाक़ा प्रदान किया था। आपने इस इलाक़े में क़स्बा भूमिग्राम बसाया और इसी को निवास स्थान बनाया। इस क़स्बे का नाम बिगड़ कर बाद में भोगांव पड़ गया। आपकी बाहें घुटनों तक पहुंचती थीं इसी कारण से अजान बाहू कहलाये। आप बड़े शूरवीर थे। इस उच्च कुल की संतान चौधरी हरबख्शराय जी शहर फर्रुखाबाद में सुपरिटेन्डेंट चुंगी के पद पर नियुक्त थे। सन १८५७ की भयानक घटनाओं ने जनता के ह्रदयों को हिला दिया था और जान व माल सभी ख़तरे में थे। इस अशांति काल के आभाव में ग्रसित होकर आप फर्रुखाबाद चले आये क्योंकि क़स्बा भूमिग्राम काफी नष्ट-भ्रष्ट हो चुका था। वहां के निवासी अधिकतर धीरे-धीरे क़स्बा छोड़कर इधर-उधर जीविका इत्यादि की खोज में जा चुके थे। आपकी धर्मपत्नी अति सुशील, दयावान और रामायण की परम भक्त थीं। किन्तु संतान के न होने के कारण उदास रहा करती थीं। साधु संतों के दर्शनों और उनके मुख से हरि चर्चा सुनने का उन्हें बड़ा चाव था। एक समय में अपने देवर के सहित एक संत साहब के सतसंग का लाभ उठाने की इच्छा से उनके स्थान पर गयीं। वह संत साहब उस समय संत कबीर की प्रिय वाणी सुना रहे थे। उससे आपका ह्रदय भगवत प्रेम आनन्द से भर गया। और आप थोड़े समय तक बेसुधी की अवस्था में डूबी रहीं। चले समय फल फूल भेंट करके प्रणाम किया, महात्मा जी ने आशीर्वाद दिया -" जाओ बेटी, फूलो फलो।"

एक दिन प्रभु की दया और कृपा से एक मुसलमान संत जो शहर फर्रुखाबाद में प्रख्यात थे, आपके द्वार पर आ पधारे और कुछ भोजन माँगा। आपने पूड़ी और साग सेवा में भेजा। किन्तु संत साहब ने मछली की इच्छा प्रगट की। इसके अभाव में वह बहुत व्याकुल हो गयीं परन्तु देव संयोग से पता लगाने पर ज्ञात हुआ कि

चौधरी साहब की भेंट में दो मछलियाँ नबाब साहब ने भेजी हैं। आपने शीघ्र उन दोनों मछलियों को पका कर तश्तरी में रखकर संत साहब की सेवा में भेंट कीं। संत साहब ने प्रसन्न होकर " अल्लाह हो अकबर " का नारा लगया और आकाश की और प्रार्थना करने लगे और एक, दो कहते हुए शीघ्रता के साथ प्रस्थान कर गए। इसके पश्चात् एक वर्ष के अन्दर इसी उच्च कुल में श्रीमान महात्मा जी साहब का शुभ जन्म २ फरवरी सन १८७३ ई। बसंत पंचमी के दिन हुआ और फिर प्रभु की दया और कृपा से २-१/२ (ढाई) वर्ष बाद उनके छोटे भाई श्री रघुवर दयाल साहब का जन्म ७ अक्टूबर सन १८७५ ई। को हुआ।

"ब्राह्मण और चमार घर , एक दीप उजियार,

तुलसी मने पतंग के ,सभी ज्योति एक सार" ।

हिन्दुओं में यह ख्याल है कि मुसलमान ब्रह्म विद्या के अधिकारी नहीं हो सकते - परन्तु वह अपनी भक्तिमाल को पढ़ें।

श्री कबीर साहब, श्री दादूदयाल जी, भारिवा साहब, प्रसिद्ध भक्त रसखान, भक्त कालू खां,श्री रामनुजचार्य जी को गुरु श्री यवनाचार्य जी, चैतन्य महाप्रभु के शिष्य हरिदास जी इत्यादि के शरीर मुसलमानी नहीं थे तो और कौन थे ?

जाति पाँति पूंछे ना कोई, हरि को भजै सो हरि का होई

ब्रह्म विद्या सर्वोपरि यदि शूद्र हू पर होय

तऊ उसे अपनाइये जाति वर्ण कुल खोय

श्रीमान महात्मा जी के पूज्य पिता चौधरी हरबख्शराय साहब अपनी धर्मपत्नी के स्वर्गवास से पहले ही शहर के रईसों की बुरी संगत में पड़ गए थे और बहुत सी ज़ायदाद और धन इत्यादि सत्यनाश कर चुके थे। ऐसी अवस्था में इन दोनों भाइयों के पालन पोषण और शिक्षा का ठीक प्रबंध ही क्या हो सकता था। छ: वर्ष की आयु में महात्मा जी का विद्यारम्भ संस्कार उनकी माताजी के जीवन काल में ही हो गया था जिसमें बड़ी धूमधाम और प्रीति भोज भी हुए।

एक बूढ़े मौलवी साहब से उर्दू और फ़ारसी की अच्छी विद्या प्राप्त की। मौलवी साहब ने आपको कविता भी सिखाई थीं। दस वर्ष की अवस्था में आप फर्रुखाबाद के मिशन स्कूल में भर्ती हो गए। उस समय उलटे दर्ज़े चलते थे अर्थात दसवें दर्ज़े से प्रारम्भ होकर दर्ज़ा एक का इंट्रेंस क्लास माना जाता था। १८ वर्ष की आयु में १८९१ ई। में आपने किसी तरह पढ़ाई करके अंग्रेजी मिडिल पास कर लिया। आपके पिता जी ने व्याह अपने

स्वर्गवास से कायस्थ उच्च कुल में कर दिया था। और मनोरंजन में सारी जायदाद खो दी थीं। इस कारण शहर में नौकर-चाकर, मान-धन, जहां सब कुछ मालिक ने दे रखा था, वहीं जूतों की बजाय पौलियाँ पहिनते थे और धोतियों के बजाय तहमद।

मुहल्ला नितगंजा में घुमना बाजार के पास एक छोटे से घर में सब लोग रहते थे। वहां जगह न होने के कारण मुफ़्ती साहब की पाठशाला (मदरसा) में एक कोठरी अपने पढ़ने के लिए अलग से ले ली थी। इसी पाठशाला में फाटक के अन्दर दूसरी कोठी में एक बड़े गुप्त मुसलमान सिद्ध संत भी रहते थे। यह संत वहीं पर लड़कों को पढ़ाया करते थे और उसी से उनका निर्वाह होता था। स्वामी ब्रह्मानंद जी बरसात के अतिरिक्त सदा गंगा जी के किनारे रेत में रहते थे। उनकी अवस्था लगभग १५० वर्ष की थी। वह बड़े सिद्ध महात्मा और सन्यासी थे। उनके दर्शनों और सत्संग के लिए महात्मा जी अपने स्कूल के साथियों के साथ बहुधा जाया करते थे। स्वामी जी और वह मुसलमान संत आपस में एकांत में बड़े प्रेम से मिला करते थे। स्वामीजी महाराज इन मुसलमान संत को फर्रुखाबाद का क़ुतुब (सर्वोच्च संत) बताया करते थे। सन १८९१ में महात्मा जी को १० रूपये महीना वेतन की नौकरी मिल गयी थी, इसी से इनका निर्वाह होता था और फतेहगढ़ पैदल ही आते जाते थे। फतेहगढ़ से फर्रुखाबाद ३ मील की दूरी पर है। इसी वर्ष नौकरी मिल जाने के बाद एक दिन महात्मा जी को फतेहगढ़ से लौटने में रात हो गयी। आंधी पानी ने घमासान अँधेरा कर रखा था, बादल गरज रहे थे और बिजली तड़प रही थी। जाड़े के दिन थे, इससे महात्मा जी की दशा बड़ी दयनीय हो रही थी। जिस समय पाठशाला में अपनी कोठरी की तरफ़ जा रहे थे, खूब भीगे हुए थे और सारा तन सर्दी से काँप रहा था। उसी समय वह मुसलमान संत दृष्टिवत हुए और उन्होंने अपनी पवित्र और प्रेम-भरी दृष्टि आप पर डाली। उन्होंने कहा, " इस तूफ़ान में और इस समय आना। "

उनके इन शब्दों में बड़ी आकर्षण शक्ति थी, तुरंत उनकी और झुक कर नम्रता से प्रणाम किया। ज़रा सी आँख से आँख ही मिली थी कि पैर की उँगलियों से लेकर सर की चोटी तक सारी देह में ऐसी बिजली दौड़ी कि तन मन की सुध न रही। उन्होंने कहा कि बेटे जाओ, जल्दी से भींगे कपड़े बदल डालो और फिर मेरे पास आकर थोड़ी देर आग से हाथ पैर सेंक कर तब घर जाना। महात्मा जी ने आज्ञा पालन किया।

उन्होंने अपनी चारपाई पर बिठा लिया और अपनी रज़ाई उढ़ा दी। उस समय आनंद और प्रकाश की वर्षा का इतना आनंद रहा कि बिजली की चमक इत्यादि सब लोहा जान पड़ते थे। यह प्रथम अवसर सत्संग का लगभग २ घंटे पवित्र चरणों में रहा। वर्षा बन्द होने पर महात्मा जी घर को गए। आप घर पर आये परन्तु भोजन नहीं किया - बल्कि लय अवस्था में पड़कर सो गए। लगभग ४ बजे सबेरे स्वप्न में देखा कि एक बहुत बड़ी भीड़ संत-महात्माओं की है और उस भीड़ के सन्मुख एक अत्यन्त तेजस्वी महापुरुष का तख़्त आकाश से

उतरा और उनके सन्मुख संत साहब ने उनको प्रस्तुत किया। उस महापुरुष ने अपनाया और कहा कि तेरा जीवन सत्यता की और जन्म से ही है।

यह स्वप्न महात्मा जी ने हुज़ूर महाराज को बताया जिसको सुनकर वह रो पड़े और कहा कि सचमुच तुम्हारे जीवन का रुझान जन्म से ही सत्यता की ओर जान पड़ता है। यह स्वप्न ओर आदेश सफल हो। फिर थोड़ी देर अन्तर्ध्यान अवस्था में डूब गए - जब चौंके तब बोले कि तुम सचमुच बहुत प्रिय हो।

एक दिन की बात है कि महात्मा जी हज़ूर महाराज सतगुरु के साथ फर्रुखाबाद शहर से फतेहगढ़ वाली सड़क पर टहलते हुए चले गए। रास्ते में यह बिचारे अपने दुःख दर्द ओर गरीबों की बातें सुनाते जा रहे थे कि बढ़पुर के थोड़ा आगे सड़क की एक पुलिया पर पहुँच कर हुज़ूर महाराज के ह्रदय में दुःख-दर्द ओर दया का भाव उमड़ आया ओर अकस्मात ही महात्मा जी की गर्दन पर दाहिना हाथ रखकर बड़े प्रेम से बोले कि भाई, बड़े होनहार ओर भाग्यशाली हो। परम् पिता के कृतज्ञ हो कि तुमने बहुत सस्ते दामों में वह सबसे बड़ी दौलत प्राप्त की, जिसका कोई मोल नहीं हो सकता।

सुख देवे, दुःख को हरै, दूर करे अपराध

कहे कबीर वह कब मिले, परम् सनेही साध

२३ जनवरी सं १८९६ ई। को शुभ दिन लगभग ५ बजे सांयकाल हुज़ूर महाराज ने महात्मा जी को लौकिक रीति से अपना लिया ओर महाराज जी ने परम् सौभाग्य से दीक्षा पायी। उससे १० महीने के उपरान्त ही ११ अक्टूबर सन १८९९ ई। को हुज़ूर महाराज ने आपको पूर्ण अधिकार प्रदान करके गुरु पदवी पर बैठाया।

सन १८९६ ई। के अन्त में महात्मा जी की बदली तहसील अलीगढ़ जिला फर्रुखाबाद नायब नाज़िर की जगह पर हो गयी ओर उसके बाद कायमगंज ओर फतेहगढ़ को बदली हुई। वहां गृहस्थी में रहकर गुप्त रूप से आध्यात्मिक मार्ग की शिक्षा जिज्ञासुओं ओर संसारियों को देते रहे।

सन १९०३ में महात्मा जी का तबादला तहसील अलीगढ़ जिला फर्रुखाबाद स्याहा नबीसी के पद पर हो गया। उस समय गुरुदेव की आज्ञानुसार मुं। चिम्मनलाल मुख्त्यार साहब को तालीम तरीक़त की इज़ाज़त देकर वहां का सत्संग उन्हीं को सुपुर्द कर गए। अप्रेल सन १९११ ई। में होली पर रंग पाशी के दिन अक्षत डालने के लगभग २ घंटे बाद अपने अनुज महात्मा रघुवरदयाल साहब को पूर्ण अधिकार व गुरु-पदवी प्रदान की।

३१ जनवरी सन १९२८ ई। को महात्मा जी ने पूर्ण अधिकार बाबू ब्रजमोहन लाल साहब को दिए।

महात्मा जी के ८ सुपुत्रियाँ ओर २ सुपुत्र हुए। ५ पुत्रियों के विवाह आपके जीवन काल में हो गए थे, २ का स्वर्गवास आपके जीवन काल में ओर तीसरी का स्वर्गवास आपके परमधाम सिधारने के बाद हुआ। २ पुत्रों में से एक का स्वर्गवास बचपन में हो गया था। दूसरे सुपुत्र महात्मा जगमोहन नारायण थे।

सन १९१३ ई। से आपके पास पहिले दो तीन सज्जन आये, उनमें से एक पंडित प्यारेलाल जी थे। आप महात्मा जी पर मन, धन ओर जान से कुरबान और न्योछावर थे। उसके उपरान्त डॉ। श्रीकृष्ण लाल जी सिकन्द्राबाद जिला बुलंदशहर निवासी, डॉ। चतुर्भुज सहाय एटा-मथुरा निवासी, श्री श्यामबिहारी लाल साहब फतेहगढ़ निवासी, श्री मदनमोहन लाल जी शाहजहाँपुर तथा अन्य सत्संगी भाई महात्मा जी के पास आये ओर उनकी अनुकम्पा से मुग्ध होकर बैत प्राप्त की। एक दिन शाम को आमों की दावत रखी। उसी दिन आम चूसने के बाद उपस्थित सतसंगी प्रेमीजनों से ऊंची आवाज़ में फ़रमाया - **" मैं श्रीकृष्ण लाल व श्यामबिहारी लाल को इज़ाज़त देता हूँ। " वह इज़ाज़त सतगुरु की ओर से दूसरे भूले भटके तथा संस्कारी एवं जिज्ञासुओं आदि को आध्यात्म विद्या की तालीम देने की सेवा करने का अधिकार होता है।**

सन १९३२ में महात्मा जी के सुपुत्र श्री जगमोहन नारायण जी का विवाह हुआ। इस विवाह के हो जाने पर महात्मा जी ने पहली बार भण्डारा प्रारम्भ किया। तब से हर वर्ष महात्मा जी के स्थान पर भण्डारा हो रहा है।

सन १९१३ व १९१४ में फतेहगढ़ में महात्मा जी साहब ने श्री कृष्णसहाय हितकारी वकील कानपुर को इज़ाज़त व खिलाफत प्रदान की।

सन १९२८ ई। में महात्मा जी ने सतसंगी जनों और प्रेमी आत्माओं के लाभार्थ समाचार पत्रिका (फरुख्शियर) आरम्भ किया। सन १९३१ ई। ईस्टर की छुट्टियों में भण्डारे के बाद से महात्मा जी का स्वास्थ्य गिरता ही गया और जून या जुलाई सन १९३१ में महात्मा जी सिकन्द्राबाद श्री कृष्णालाल जी के पास गए और डॉ। साहब देहली दूसरे डॉक्टरों को दिखाने ले गए। किन्तु कष्ट बढ़ता गया और वह स्वयं उठने-बैठने चलने-फिरने से अधिकतर मज़बूर हो गए और अन्त में १४ अगस्त १९३१ की ररत को अन्तरध्यान हो गए।

इस प्रकार आपने ब्रह्म विद्या उपार्जन कर हम सब भूले-भटकों को सतमार्ग पर लगाने व चलाने का प्रयत्न किया।

श्याम गौर किमि कहौं बखानी

गिरा अनयन नयन बिनु बानी

प्रिय वचन - १

वेदान्त (ब्रह्मवाद)

इस तरीक़े को ज़ाहिर करने वाले श्री वेद व्यास जी हैं। इस मजमून पर ब्रह्मसूत्र नामी एक किताब लिखी है जो इस मत का ख़ास मुस्तद ग्रन्थ है। इसके बाद एक बुज़ुर्ग शंकराचार्य नामी पैदा हुए जिन्होंने एक और भी फ़रोग़ दिया। बाद अजान की सदी के बाद गौडया आचार्य के सिलसिले में एक और शंकराचार्य पैदा हुए। यह वेदान्त के सबसे बड़े हामी और हैवत मुअल्लिम गुज़रे। इस दिल व दिमाग़ के आदमी कमतर पैदा हुए हैं। महाराज रिशवदेव ने क़ुरबानी की रसम बंद की है, ऋषिओं ने उपनिषदों में कर्मकाण्ड की मुखालिफत शुरू की और कर्म को अज्ञान और अंधकार ठहराया। यहां से हिन्दुओं के ज्ञानकाण्ड का आग़ाज़ होता है। ब्राह्मणों को कर्मकाण्ड क़रार देकर अपना ज़रियामाश मुक़र्रर किया और क्षत्रियों ने ज्ञानकाण्ड को अच्छा समझ कर इसको ज़रियमाद का इख़्तियार किया। कर्म के सिलसिले में नाम हिन्दुओं ने मीमांसा रखा। संस्कृत में लफ्ज़ मान-ज्ञान की तलाश करने से निकला है। इसका नाम पूर्व मीमांसा है। ज्ञान तलाश का पहिला मरहला है। ज्ञान फिलसफ़े का नाम ' उत्तम मीमांसा' है। यह ज्ञान की तलाश का पिछला मरहला है। कर्म के फ़िलसफे की इब्तदा व्यास ऋषि से हुई है। जैमुनी के फ़िलसफे का नाम कर्मसूत्र और व्यास के फ़िलसफे का नाम ब्रह्मसूत्र या वेदान्त सूत्र कहलाता है। वेदान्त ज्ञान की तलाश का पिछला मरहला है। यह ख़ुद ज्ञान नहीं है। तज़ुर्बे से यह साबित हुआ है कि कर्म और ज्ञान दरमियान के मरहले हैं। जब तक अभ्यासी इनमें से न गुज़रेंगे तब तक ज्ञान का अनुभव सख्त कठिन होगा इसलिए और कई दर्शन को मुक़म्मिल और उत्तम समझने लगे। और आगे बढ़ने की ज़रूरत महसूस नहीं की। उपनिषदों ने इशारा किया, बौद्ध ने उसे अमली जामा पहिनाया, शंकराचार्य ने विचार की अहमियत ज़हिन नशीन कराई। लेकिन उनके तरीक़े में भी चौसाधन (चार किस्म के शगल) की अहिमीयत ज़हिन नशीन कराई है।

ज्ञानियों की जियादातर ज़मा खर्च ज़वानी में ही पड़ी रहती है। माया नाद, ब्रह्म नाद, प्रणाम नाद, मिथ्या नाद, धूर्त नाद वग़ैरह उसकी बेशुमार शाखें सबूत हैं और आख़िर में मज़बूर होकर इस सबको उत्तरोचनी ख्याली यानी लाक़ाबिल बयान उसूल मौजूआ की पनाह लेनी पड़ती है और जिस क़दर बहस-मुबाहिसा, दलील हुज़्ज़त का ज़ोर होता है, यहां आख़िर खत्म हो जाता है। वेदांती कहते हैं कि यह जगत मिथ्या है। मिथ्या कहना ही ख़ुद मिथ्या है क्योकि मिथ्या नफ़ी का तक़मा है। नफ़ी को अस्बात में लाना सख्त गलती है। दूसरे जब सिद्धांत और उसूल ही यह ठहरा रहे हैं कि एक के सिवा दूसरे की हस्ती नहीं है तो फिर कोई दूसरा है कौन जो उसको सहीद साबित कर दिखाना चाहता है और इसका इम्कान कैसे है। तौहीद की

दलील खुद रद्द तौहीद है, तौहीद का साबित होना या करना अस्लियत के गहरे खन्दक में गिरना है। जहाँ दो होते हैं वहाँ एक दूसरे की कहता वगैरह २। और जहाँ दो नहीं होते वहाँ इनका कहना-सुनना, समझना-जानना कैसे मुमकिन है।

और अगर इस पर और दलील पेश की जावे तो वह और ही अद्वैत और तौहीद को झूठलानी और उसका पतलान करती है। यह जगत साफ़ नज़र आ रहा है - हम इसको बरत रहे हैं - इसका मतलान बातों से तो होता नहीं है। और जब लोग यह ख्याल करते हैं कि क्यों भासता है तो जबाब यह दिया जाता है कि यह माया के मर्म की वजह से है। बहुत अच्छा - फिर माया क्या है ? इसका जबाब यह दिया जाता है कि यह मांझा के लड़के-आकाश के फूल और सुराव से मुशावह है। यह सब ही सही है -लेकिन फिर, यह सब मिथ्या ही मिथ्या है, फिर हस्त के साबित करने में मिथ्या शै की मुशावहत क्यों दी जाती है ? तीसरा सवाल यह किया जाता है कि यह जगत भासता किसको है - उसका जबाब वेदान्ती नहीं देते। अगर वह कहें कि ब्रह्म को भासता है तो ब्रह्म के अलावा और कोई हस्ती खुद उनकी दलील से साबित होती है और जब जबाब नहीं बन पड़ता तो उसको उत्तरोचनी कहानी पाना नाक़ाबिल बयान उसूल मौजूआ का सहारा लेकर गुफ्तगूं के सिलसिले को तय कर खत्म करना पड़ता है। वेदान्त के समझने के लिए अनुभव ज्ञान की ज़रूरत होती है जो इंसान में मौजूद है। वहम का पर्दा पड़ा हुआ है और वह वहम इस तरह की अक़ल उधेड़-बुन से दूर नहीं हो सकता। जिस तरह हमको हर शै का इल्म साधने से हासिल होता है वैसे ही साधन करने से जब बहम मिट जाता है हक़ीक़त की समझ ख़ुद व ख़ुद आ जाती है।

अगर इब्तदाई मरहले में साधन की तालीम ज़रूरी दी जावे और बतदरीज़ उसके अमलऔर शमल में अनुभव हो जावे तो फिर हमारा और वेदान्त का ज़रा भी झगड़ा न रहे। बौद्धों के फिलासिफे में एक लफ्ज़ शून्य आता है जिसे अब भी संत सुन या महासुन कहते हैं। इस शून्य का ग़लत तज़ुर्मा खुलू (ख़ाली) है। असल में इसका तज़ुर्मा हो नहीं सकता। और जब बौद्धों ने यह कहा कि जगत शून्य से पैदा हुआ है तो शंकर स्वामी ने जबाब में उन्हें तंग कर दिया कि जब कोई शै ख़ाली है तो फिर उसके खुलू का इल्म किसे और किसको हुआ। बौद्ध सोचने लगे तब तक मज़ाक़ मज़ाक़ में उनको ला जबाब कर दिया और अपने फतह के ऐलान की मुश्तहरी कर दी।

इसी शून्य का तज़ुर्मा सूफियों ने अदम नेस्ती किया है, लेकिन अदम नेस्ती नहीं है। शून्य का असल तज़ुर्मा हो ही नहीं सकता। अदम की भी हस्ती है। रामानुज स्वामी और शंकर स्वामी के अक़ीदे सिर्फ नाम का फ़र्क़ है और वह मामूली है। सिर्फ वाहमी हठधर्मी और ज़िद की वजह से खराबी पड़ गयी है। वरन दोनों ही तौहीद के क़ायल हैं।

अद्वैत

श्री शंकर स्वामी कहते हैं कि जो चेतन है और वह अद्वैत है और वहिदिवत के सिवा कुछ नहीं है।

श्री सम्पदा विशिष्टा द्वैत

रामानुज स्वामी ने यह बतलाया कि अद्वैत और अहिदियत तो है लेकिन यह अद्वैत पना जड़ और चेतन दोनों का पहलू लिए हुए है। अगर वह इससे ख़ाली होता तो फिर जगत में जड़ और चेतन का ज़दूर न होता। पैदायश और सृष्टि एकसे नहीं होती। और यह दोनों मिले जुले मटर के दो टुकड़ों की तरह एक हैं। जब वहिदियत की जानिब नज़र है तब दो नज़र आते हैं। और जब एक की तरफ़ निगाह है तो फिर एक के सिवा कुछ नहीं। यह फ़र्क़ कुछ फ़र्क़ नहीं कहलाता। अगर फ़र्क़ है तो निहायत अल्तफ़ और बारीक़। उपनिषदों ने यही इस तरह समझाने की कोशिश की है। असलियत पहले मटर के दो टुकड़ों की तरह मिली जुली थी और जब उनमें अलहदगी हो गयी तो एक पुरुष बना दूसरी प्रकृति और उनके मेल से इस जगत का ज़हूर हुआ।

द्वैत - अद्वैत

इसकी इस्लाह के लिए माधवाचार्य ने अपनी द्वैत-अद्वैत सम्प्रदा चलाई। इसकी क़रीब-क़रीब वह ही हैसियत है जो मौज़ूदा आर्य-समाज की है।

शुद्ध अद्वैत

इसके कई सौ वर्ष के बाद वल्लभाचार्य ने शुद्ध अद्वैत शास्त्र की बुनियाद रखी। रामानुज सम्प्रदाय की कई पतति के बाद स्वामी रामानंद जी का ज़हूर हुआ जो निस्वतन आज़ाद तवा थे। इन्हीं के ज़माने में परमसंत कबीर साहब का ज़हूर हुआ। कबीर साहब का इष्ट रामानुज या रामानंद जी के इष्ट यानी रामनाम से मुख्तलिफ हैं। इनका क़लाम है :-

दोहा :- *जगत में चार राम हैं, तीन राम ब्योहार*

चौथा राम निज सार है, ताका करो विचार

चौपाई :- *एक राम दशरथ घर डोलैं, एक राम घट -घट में बोलैं*

एक राम का सकल पसारा, एक राम त्रिगुण से नियारा।

कौन राम दशरथ घर डोलैं, कौन राम घट-घट में बोलैं

कौन राम का सकल पसारा, कौन राम त्रिगुण से न्यारा

आकार राम दशरथ घर डोलैं, निराकार घट-घट में बोलैं

बुं०द राम का सकल पसारा, निरालम्ब सब ही से न्यारा।

दोहा :- *राम कृष्ण औतार हैं, इनकी नारी मोड़*

जिन साहब ने जग रचा, उन्ही जनी है राड़

यह चौथा राम कबीर साहब का इष्ट है। रामानुज सम्प्रदा वाले तीन राम के उलझन में हैं उनको इस चौथे राम की ख़वर तक नहीं है।

दोहा *:-* *तीन लोक को सब कोई धावे, चौथे देव का मर्म न पावे*

चौथा छोड़ पंचम चित लावे, कहें कबीर हमरे ढिंग आवे।

यह राम हक़ीक़त में सतनाम है और वह भी पांचवा पद है। इन पांचों के अंतर्गत (शमूल) में पंच अग्नि विद्या का रमज़ छिपा हुआ है जिसका इशारा उपनिषदों ने दिया है। कबीर पंथी हिन्दुओं की देखा देखी 'ओंकार ' के उपासक और नानक पंथी भी उसको अपना इष्ट करार देते हैं।

' ओंकार ' पर्दा हो रहा है असल जात का। अमली और इल्मी दोनों तरह की ज़िंदगी की ज़रूरत है। ख़ाली एक से काम नहीं चलता। इल्मी में यह कुछ ज़रूरी नहीं है कि किताबी इल्म हो। सिर्फ़ इन तस्लीमी पहिलू को मद नज़र रखने की ज़रूरत है।

(१) सतनाम (२) सतसंग (३) सतगुरु

(१) **सतनाम** से सच्चे मालिक के सच्चे नाम को जो आदर्श मैराज या इष्ट पद है और जो सिर्फ़ गुरु कीँ नसाखत से हासिल होता है। यह नाम एक तरह का कानून कुदरत है जो इंसान के बातिन में (घट में) गूँज रहा है। इससे सुरत यानी रू को मेल मिलाप से ख़ुद व ख़ुद रूहानियत आने लगती है। और जहां ज़रा भी अंदरूनी लज़्ज़त मिलने लगी ख़ुद व ख़ुद उरूज़ का रास्ता खुल जाता है। इसी का संतमत में अभ्यास कराया जाता है।

(२) **सतसंग** में नाम से सोह्बते हक़ या हक़ीक़त की संगत का जिसका कमाल शख्सियत में हक़ीक़त का जलना नुमाया हो गया है और जो ख़ुद जात की हक़ीक़त से मिला जुला हो उसकी सोहबत को सतसंग कहते हैं। मामूली कथा वार्ता को सतसंग का नाम नहीं दिया जाता। इसी का दूसरा नाम सोह्बते मुर्शिद या गुरु साथ रहकर उपासना करना है। सतसंग से इल्मी तौर पर हक़ीक़त की समझ आती है। सतनाम से वातिनी तौर पर उसे इल्म का इन्क्शाफ होता है।

(३) **सतगुरु** - जिस जात के मिलाप से यह हर दो किस्म की मफाद की सूरत नज़र आवे वह सतगुरु कहलाती है।

उपनिषदों ने इशारा के तौर पर तीन रास्ते बतलाये हैं।

(१) **देवयान पंथ** यानी रौशनी का रास्ता (२) **पितृयान पंथ** यानी रौशनी तारीकी का मिला-जुला रास्ता

(३) **बिलकुल तारीकी** का रास्ता

तारीक़ राह के चलने वाले के लिए क़तई न ज़ात का इम्कान नहीं है। पैदा करने से मुराद सिर्फ़ प्रगट करने से है।

संभाल इसको तराज़ू के दो पल्लों की तरह बराबर रखते हुए काम जारी रखने का नाम है।

सिंघाट से मुराद शांत करने, शांति देने और एकसानियत की हालत में मुन्तक़िल करने को कहते हैं।

काया सबसे पहली चीज़ है और यह ही सबसे आखिरी चीज़ होगी।

इन्सान क़ुदरत की मुकम्मिल जुज़वियत और शख्सियत का नाम है। जो वहमा औसाफ़ मौसूफ़ होता हुआ औसाफ़ की हदीयत से ऊंचा है। आज़ाद मुतलक़ व मुसर्रत की मुजस्सिम सूरत तअल्लुक़ में तअल्लूकी और बे तअल्लूकी में वा तअल्लुक़ कैद व बंद रहता हुआ आज़ाद और नज़ात रखता हुआ मुक़ैयद देवता - दिव्य शक्ति यानी क़ुदरत की मुन्नवर ताक़त का नाम है। यह तमाम कुदरती ताक़तें और क़ुदरती औसाफ़ इन्सान में हमेशा मौज़ूद रहते हैं। जब वह उनकी तरफ मुतवज्जह होकर उन्हें तरक़्क़ी देता है तब वह सिद्धि शक्ति वाला कहलाता है। तरक़्क़ी देना ही पैदा करना या प्रगट करना है। और इस नज़र से इन्सान देवताओं का पैदा करने वाला है। वरख़िलाफ इसके जब किसी क़िस्म की ताक़त या लियाक़त किसी ख़ास इन्सान में तरक़्क़ी पा जाती है तो वह ही ताक़त और लियाक़त उसे दूसरों से मुम्ताज़ कर देती है और वह प्रगट हो जाता है।

उपनिषद कहते हैं कि पहिले हक़ीक़त थी और वह हक़ीक़त छिपी हुई थी। उसी हक़ीक़त ने इख्तफा के पर्दे को चीर कर अपना ज़हूर किया और वह पुरुष कहलाया। यह पुरुष इन्सान ही था। पुरुष लफ्ज़ संस्कृत

ज़बान के दो लफ़्ज़ों पुर (जिस्म) और ष (रहने) से बना है। जो जिस्म में रहता हो वह ही पुरुष है। जिस्म में रहने की क़ैद पुरुष में हर वक्त रहेगी। जब रूप है तो नाम ज़हूर होगा। हम उसे सत्पुरुष यानी इन्सान क़ामिल का नाम देते हैं और क़ुदरत के पहिले ज़हूर के लिए यह नाम ज़ियादा मौजूं है। इन्सान क़ामिल ने यह रचना की है। एक मानी में यह रचना करने वाला है। खिल्क़त का ज़हूर उसी के आसरे हुआ है क्योकि वह ही सब खिल्क़त का मदार इलह अधिष्ठान और अधिष्ठाना है। उसी के सहारे सब कुछ है। लेकिन वह निरालम्ब निराधार है। दूसरे जिस मानी में आप ख़ालिक़ या पैदा करने वाला मान रहे हो इस मानी में वह ऐसा नहीं भी है। सत के मानी अलावह सच होने के ' होने ' के भी हैं।

सत पुरुष यानी इन्सान के इर्दगिर्द एक हुवावी माद्दा ने इतज़रात की सूरत में हल्का भार रखा था। जिस तरह सूरज के इर्दगिर्द उसका नूर बिखरा रहता है क़ुदरत के हर शै के इर्दगिर्द यही सैयाल माद्दा हर जगह रहता है। जैसे हीरे के ऊपर सनियाँ मडलाती रहती है। यह अपने मदार हलह के आसरे रहती है। सत पुरुष के नीचे जो सैयाल माद्दा हल्का मारे हुए था उसका नाम आदिमाया है। यह हर वक्त चक्कर खाती रहती है। इस चक्कर में सतपुरुष का अक्स पड़ा और वह माया के मेल से मिलकर ख़ास किस्म की शख्सियत में ज़हूर पजीर हो गया। उसकी हैसियत वैसी है जैसी हमारे तुम्हारे साया की होती है।

यह साया हमज़ाद कहलाता है और सबके साथ रहता है। इस साया या हमज़ाद ने प्रगट होकर अपनी तवज्जुह सत पुरुष की जानिब की जिसकी वजह से उसमें ख़ास किस्म की हस्ती आगयी। और कई रंग की कलायें जो माया में थीं उसके हिस्से में आगयीं। इसने सत पुरुष की हस्ती आयर्त लेकर कहा कि मैं हूँ और उसके इस तरह कहने से सूक्ष्म अहंकार यानी ग़रूर का माद्दा पैदा हो गया। यह अहंकार क़ुदरत का पहिला तत्व है। शख्सियत के ज़हूर का नाम अहंकार है। अहम (मैं) कार (जो बनाता है) से पैदा हुआ है। इन्सान जब किसी शै को देखता है तो उसका अभिमानी होकर उससे तअल्लुक़ जोड़ता है और उसी के रूप को इख़्तियार कर लेता है। यह अभिमानी होने का मतलब है - अभि (क़ुरबत या मेल) मान (मन का जोड़ना) या मानना। जिस तरह कोई शख्स किसी बुज़ुर्ग के साथ तअल्लुक़ का रिश्ता जोड़कर उस जैसा बनना चाहता है और असल में वह वैसा नहीं है। उसी तरह उस छाया पुरुष मान सत पुरुष के हमज़ाद ने सत पुरुष की हस्ती को आर्यत लेकर अपनी हस्ती का इक़रार किया और कहा कि मैं हूँ और उस अहंकार तत्व यानी हस्ती के ज़हूर का माद्दा पैदा हुआ। इस हमज़ाद यानी साया पुरुष का नाम काल है या काल पुरुष है। इस नाम के रियायत की वजह है कि यह चक्कर खाती हुई माया के पेट से इसका ज़हूर हुआ।

चक्कर से बाकयात हालात और मसानहात का यह तक़रार इत्तदा हुआ करता है और चूंकि इन सब बातों का ज़हूर वक्त वक्त पर आता है। इसलिए इस वज़ूद का नाम काल पुरुष हुआ और इससे पैदायश क़पाय और मौत के बाकयाल हमेशा हुआ करते हैं।

इंसान के तबज्जुह करने से उसका साया जीता जगता बनकर ख़ास किस्म के काम करने लगता है, इसी को हमज़ाद का अमल कहते हैं। यह सिर्फ तबज्जुह के इज़हार का मामला है। सब बातें तबज्जुह से हो जाती हैं। क़ुदरत में एक ख़ास उसूल है जो खुद व खुद अपने आप काम करता रहता है। इब्तदा में क्या था न कोई उसे हस्त कह सकता है न नेस्त कह सकता है क्योकि हस्ती और नेस्ती दोनों निस्बती कलम हैं और वह इन दोनों से परे है। जब एक शै को कुछ कहा जायगा तो खुद निस्बती मदारिन बन जायेंगे। वग़ैर निस्बत के ख्याल के इज़हार में सख़्त दिक्कत होती है।

उपनिषद इसको इस्तारे की ज़बान में यों कहते हैं कि इब्तदा में तारीक़ी थी, तारीक़ी को ढक रखा था। इसी तारीक़ी में छवि हुई और नूर का इज़हार हुआ।

यह ख़्याल मुवहिम तौर पर ज़ाहिर किया गया है वरन जो शै थी या है वह न तरीक़ी है न नूर है। वह क्या है या क्या थी ? ख़्याल उस तक आसानी से नहीं जाता। छावे मौज़ को कहते हैं। मौज़ उसूल है। रचना उसी के मुतअल्लिक़ है। मौज़ से सतपुरुष और कालपुरुष दोनों का ज़हूर हुआ। एक तो ऊपर रह गया दूसरा नीचे पर्दा की तरह गिरा। नूर ऊपर था, नीचे साया या नूर की बदौलत साया की तमीज़ हुई और चूंकि नूर ने साया साया को मुम्ताज़ होने या तमीज़ी हैसियत में ज़ाहिर होने का मौका दिया, इसलिए इसे इस मौका देने को हम तबज्जुह कहते हैं। नूर में जो छावे यानी हरकत है उसको उसूल क़ुदरत कहते हैं। असल उसूल क़ुदरत या हरक़त असली नूर में है। उसके साया में नक़ली हरक़त है। दर असल इस उसूल का नाम तवज्जुह है जो ऊपर और नीचे दो तरफ़ काम करती है। यह तबज्जुह बाहमी थी।

जिस तरह रोशन चिराग़ से धुआं जाहिर होकर रौशनी से जुदा होता है और रौशनी उसको ज़ाहिर कर देती है और यह धुआं रौशनी को अपनी जानिव खींचता हुआ ज़हूर में आता है और रौशनी की मदद ले-ले कर काम करने लग जाता है वैसे ही यहां भी कैफियत हुई। इसलिए इस तबज्जुह को आप वहमी कह सकते हैं।

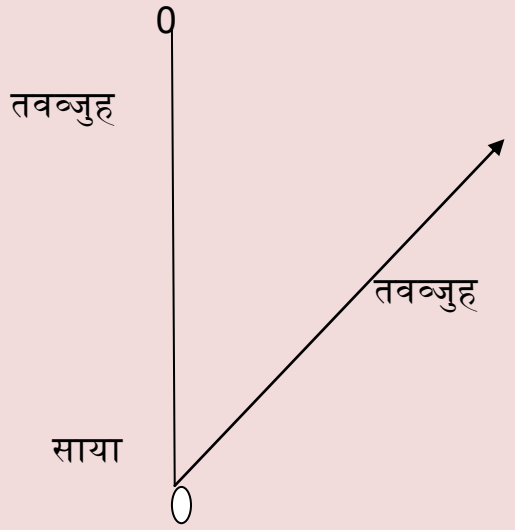

जिस तरह कि मौज़ से ऊपर के तबके में कार्रबाई शुरू हुई थी उसी तरह अपनी वारी पर इस काल पुरुष ने पहले अपने आप को दो हिस्सों में तकसीम कर दिया। एक हिस्सा तो पुरुष कहलाया और दूसरा हिस्सा प्रकृति बना। पुरुष रूह थी और प्रकृति माद्दा थी और इनके मेल करने से इस तरह रचना होने लगी जैसे मटर की दो वाली अलग होकर अपने अन्दर से और दानों को बतदरीज़ पैदा करते हुए तोलति और तनासुल के सिलसिले को जारी करते हैं।

यह दोनों साया महज़ थे, खुद काम करने के नाक़ाबिल थे। इस वजह से सतपुरुष की तबज्जुह को या तबज्जुह की मदद को लेकर काम करने लगे। धुंए में ख़ुद प्रगट करने की ताक़त नहीं है। वह रौशनी का मुहताज है और काले रंग का होता हुआ रौशनी को ले लेकर प्रगट होता रहता है। प्रकृति का नाम माया, प्रधान है और माद्दा है और वह ही तमाम तत्वों और अतासिरों की जड़ है।

प्रकृति प्रधान से यह तत्व इस तरह से पैदा हुए कि सतपुरुष का अंश यह कालपुरुष है। पहले उसमें यह प्रधान हो हुई थी और दोनों ही गोलाकार यानी मरक़र्ज़ा सूरत के थे। प्रधान - प्र (पहले) और धान (रखने या धारन करने) से निकला है। जो पहले किसी चीज़ को धारन करने की क़ाबिलियत रखती हो , वह प्रधान है। यह उसका खास्सा या वस्फ़ है। फिर यह ही प्रधान किसी शै को अपने अन्दर रख लेने या धारन करने के बाद प्रकृति कहलाने लगी। प्रकृति का लफ्ज़ प्र (पहले) और कृति (करने) से बना है जोतियानी बनाने का जिसमें बस्फ हो वह प्रकृति है। हरक़त जब होती है दायरा ही की सूरत में होती है। इस वजह से रचना में सब सूरतें - सतपुरुष से लेकर सूरज, चाँद, सितारे वग़ैरह गोले ही होते हैं।

तजकीर और नानियत कि हैसियत पैदा तो वहां होती है जहां माया और चेतक की मिलौनी तमीजी सूरत पैदा कर लेती है। पैदायश के सिलसिले में जब कोई चीज़ पैदा नहीं होती बल्कि प्रगट होती है। इस प्रगट होने के सिलसिले में जो पैदायश के मदारिज आते हैं उनका इल्म उस वक्त होने लगता है जब अहंकार तत्व यानी अपनी हस्ती की इद्राक की तमीज़ आती है। इसी अहंकार की दूसरी सूरतें मन, बुद्धि और चित्त हैं। यह आपस में हिले-मिले रहते हैं। चित्त में चिन्तन यानी हिस करने की ताक़त है (शक्ति है)। मन में मनन यानी गौर करने और सोचने की ताक़त है। बुद्धि तमीज़ के साथ फैसला करने की ताक़त है। अहंकार चूंकि हस्ती यानी अपनी सत्ता और ज़हूर के नुमायश का तत्व है वह बुद्धि के फैसले को मज़बूती देता है। यह चार तत्व प्रधान या प्रकृति में उस वक्त प्रगट होते हैं जब कालपुरुष को अपने (में पने) का मान होता है। यह क़ुदरत के चार पहले तत्व हैं और अगर तवज्जुह या सुरत को शामिल कर लिया जाये तो यह पांच इब्तदाई तत्व हो जाते

हैं। अहंकार की चूंकि हस्ती की पहली तमीज़ी हालत है उसी से शब्द प्रगट होता है और यह शब्द (आवाज़) प्रगट होते ही आकाश तत्व को पैदा कर लेता है। फिर शब्द से स्पर्श पैदा होता है जो छूने, मिलने या वासिल होने का तत्व है। इस वायु में आवाज़ तो आकाश का हिस्सा और छूने का इल्म उसका अपना खास्सा है। फिर इसी हवा या वायु के मंथन से रूप तत्व निकलता है जो अग्नि या आग की शक्ल में ज़हूर करता है। इस आग में तीन कैफ़ियतें हैं। शब्द, स्पर्श ,रूप। शब्द आकाश का, स्पर्श वायु का और रूप अग्नि का गुण है। फिर इसी रूप से रस या चखने का असर (लज्जत) निकलता है जो जल यानी पानी की सूरत में नमूदार होता है। इसमें चार गुण - शब्द, स्पर्श, रूप और रस - होते हैं। शब्द आकाश का, स्पर्श वायु का और रूप अग्नि का, और रस उसका जाती आयना जौहर है। आखिर में इसी तत्व के मंथन से पृथ्वी तत्व बरामद हुआ और जो पांच खबास वाला है। इसमें गंध ख़ास उसका अपना ख़ास गुण है। इस तरह कुदरत में बतदरीज सूक्ष्म (लतीफ) और स्थूल (कसीफ़) तत्वों का ज़हूर होता है।

सत पुरुष की काया इन तत्वों में से कैसी भी नहीं बनी है, बल्कि वह ख़ालिस चेतना काया ही काया चेतन से बनाती है या चेतन है। चेतन भी एक तत्व है जो इन तत्वों से मुख्तलिफ है वह ज्ञान तत्व कहलाता है लेकिन ज्ञान से ज़ाहिरी इल्म मुराद नहीं है। वह सबका आधार है। जिस तरह चिराग़ के रोशन होते ही रोशनी और तारीक़ी अलहदा हो जाती है वैसे ही जिस वक्त असलियत हक़ीक़त या ज़ाहिर या जाट में मौज़ उठती है और चेतन अलग और माद्दा (माया) अलग हो जाता है।

सतलोक में सतपुरुष की काया ख़ालिस चेतन की होती है। फिर ब्रह्म लोक या नीचे उतरकर ख़ालिस चेतन या लतीफ़ काया की मिलौनी से जो मुजस्सिम शख़्सियत बनती है वह काल पुरुष कहलाता है। फिर इस काल पुरुष के मण्डल से जो कसीफ़ माया का पर्दा नीचे गिरता है वह महाभूत यानी स्थूल तत्व आकाश, वायु, अग्नि, जल पृथ्वी का पैदा करने वाला होता है और नीचे की रचना में तमाम जीवों के जिस्म इन्हीं तत्वों से बनते हैं। मिसाल यह है कि - शमा को देखिये। जड़ में सफ़ेद रोशनी है। यह चेतन देश की चेतन से मुशावह हैफिर जरा उससे नीचे एक रोशनी है जो सुर्खी मायल है। यहाँ सफ़ेद रोशनी और लतीफ़ स्याही का मेल है। यह काल देश का मुशावह है। इससे और नीचे उतरकर धुंआ निकलता है जो बिलकुल स्याह रंग का है वह माया देश से मुशावह है। इन तीनों के दरमियान यह फ़र्क़ है। सत लोक में ख़ालिस चेतन है। काल लोक में ख़ालिस चेतन और लतीफ़ माया की आमेज़िश है और माया लोक में चेतन चाहे ख़ालिस ही हो लेकिन कसीफ़ माद्दे के घने पर्दे से ढका हुआ रहता है। सत लोक में सत रचना है जो ग़ैर फानी है। काल लोक में सत और

असत से मिली हुई रचना है जो गो फ़ानी तो ज़रूर होगी लेकिन सत्यैदाद वक्त के नज़र से लाफ़नियत और फ़ानीयत से मिली हुई कही जा सकती है क्योंकि उसे सत की कुरवत हासिल है। माया लोक में फ़ानीयत या माया-मदारी है क्योंकि सत से उसकी दूरी है। सत लोक में चेतन महज़ है। काल लोक में चेतन और लतीफ़ माद्दा है जो अपने अन्दर लतीफ़ अनासिर रखता है।

मुमकिन है कि वहां सिर्फ अहंकार तत्व ही रहा हो जो लतीफ़ माद्दे का अजवासी अन्सर है और माया देश में लतीफ़ तत्वों से एक के बाद दीगरे प्रगट होकर कसीफ़ अनासिर को पैदा किया है। इन तीनों देशों के अलावह एक चौथा देश और भी है कि जिसका आका सतलोक कहलाता है और संतों का मैराज है जिसका अनुभव महज़ होता है। इसके परे भी एक पांचवा लोक है जो ज़वान से तो कहा जाता है लेकिन इसका समझ में आना ज़रा मुश्किल है।

नीचे के जो दो लोक हैं वह महा स्थूल हैं और वह माया देश में शामिल हैं इस वजह से उनकी तरफ इशारा नहीं किया गया है और उनकी तरफ रुजूम करने से भर्म पैदा होता है। शास्त्र कहते हैं कि लोक सात हैं

भू भुवः सोहा महा जना तप्य और सत्यम

इनमें से भू लोक तो नीचा ज़मीनी तबक़ा है और भुवः यानी भुवर लोक ज़मीनी इंसान की जुज्बी चेतन की हालत है।

ब्रह्म और पारब्रह्म दोनों ही क़ुदरत के तत्व हैं।

ब्र (बढ़ता हुआ) और मा (सोचता हुआ)। ब्रह्म की पैदायश पारब्रह्म तत्व से हुई जो कुदरत का पहला तत्व है। उपनिषदों ने माया शील तत्व को ब्रह्म माना है और जो उससे ऊँचा है उसको शुद्ध ब्रह्म का खिताब दिया है। काल पुरुष को हम शुद्ध ब्रह्म कहते हैं। इसके बाद जो फ़रदियत उससे ज़हूर में आयी वह माया शील ब्रह्म कहलायी। जो शै व्यापक यानी मुहीत कुल होती है वह भी उच्छेद और महदूद भी होती है। महदूद और गैरमहदूद दोनों ही निस्बती अल्फ़ाज़ हैं और सिर्फ़ निस्बती तवक़्क़े में उनकी अस्लियत है। निस्बती तवका को छोड़कर फिर इनके स्तयमाल सत्यैमाल करने की ज़रूरत नहीं रहती। और वह ग़ायब और मादूम हो जाते हैं। जो शै सर्व देशीय होती ही वह एक देशीय भी होती ही। अपने वसीअ मण्डल में तो वह ग़ैर महदूद होती है और अपनी शख़्सियत से वह महदूद रहती है। मस्लन सूरज अपनी शख़्सी फ़रदियत की नज़र से एक देशी यानी महदूद हुआ गोलाकार नज़र आता है और वह ही सूरज अपने मण्डल यानी निज़ाम शमसी के कुर्रे में मुहतिकुल माना जाता है।

तमाम अनवार, मज़ाहर, तजल्लियात, अनासिर और अनासिर से मुरक़्क़िब अशवास सबका यह ही हाल है। तमाम देवताओं की और आपके जिस्म और अजू की भी यही हालत है। इनमें से सब सर्व देशीय भी और एक देशीय भी हैं। मसलन :- हाथ को देखो, एड़ी से चोटी तक सर्व देशीय है क्योकि हर मुकाम में वह मुहीत है लेकिन उसकी एक जगह भी मुक़र्रर है। इसी तरह से यह ब्रह्म और पारब्रह्म भी है। यह सर्वदेशीय भी है और एक देशीय भी है।

जो लोग सिर्फ़ व्यापक निश्चय की टेक बाँधते हैं वह ज्ञान से ख़ाली रहते हैं। पारब्रह्म को शुद्ध इसलिए कहा गया कि वह शुद्ध माया के दायरे से तअल्लुक़ रखता है। और ब्रह्म को माया शील इस वजह से कहा जाता है कि वह माया के मेल से रचना करता है।

पारब्रह्म चूँकि सत पुरुष यानी इन्सान कामिल का अंश है इसलिए उसकी तरह वह अपनी ही नीचे की रचना का आधार है और उसके सहारे यह ब्रह्म उसका अक्स बना हुआ त्रिगुणात्मिक माया के ज़रिये काम करता रहता है। वह ही व्यापक और उच्छेद है और यह भी व्यापक और उच्छेद है यानी मुहीत कुल और महदूद और दोनों शरीर धरी हैं काया वाले और मुजस्सिम हैं।

इति ॐ ओम

प्रिय वचन २

वेदान्त (माया की तशरीह)

माया - मा (माप) और या (वसीला) यानी जो शै किसी चीज़ का माप (वसीला) हो वह माया कहलाती है , यह लफ्ज़ी मानी हैं और इस्तलाही वे शुमार हैं। यह चूँकि असल में प्रधान या प्रकृति जिसका पहले ज़िक्र हो चुका है। इसमें बनने बिगड़ने और तब्दील होते रहने का क़ुदरती खास्सा है। यह एक निहायत ही बारीक़ -हुबाबी और लतीफ़ गुबार है। जो सत लोक के नीचे बसीअ पैमाने में फैला हुआ है और इसी के पैमाने से हर एक शै का मबाज़ना जाँच -तौल ही के सहारे है। यह सिफत असल में तीन हैं - सत, रज और तम।

(१) **सत** - मैं पने या हस्ती का बस्फ है। इसको प्रकाश, आनन्द, ज्ञान, मान, अभ्यास , बुद्धि वग़ैरह जो चाहें कह सकते हैं।

(२) **रज** - रंग देने को रज कहते हैं। यह रंग देने का बस्फ ही है। इस हर किस्म का फेल -ख्याल-मसरूफियत-सरगर्मी -तहसील और तकसीर वग़ैरह को शामिल कर सकते हैं।

(३) **तम** - तारीकी है। इसमें सुस्ती, काहिली, मफूलियत, जहालत, बेवसी से पड़े रहने वग़ैरह के औसाफ़ का शमूल है। यह तीन बसफ़ है जो माया के कहे जाते हैं। संस्कृत जबान में बस्फ को गुण कहते हैं। इसके लगवी मानी राय या मशवरा देने के हैं। अगर माया न होती तो ब्रह्म की निस्बत क्या राय क़ायम की जा सकती या ब्रह्म की समझ किस तरह आ सकती है। ब्रह्म माया से मिलकर माया की मदद से हमेशा अपनी तीन सूरत बनाता रहता है :

(१) **हिरराय गर्भ** - सोने के अराडे की शक्ल वाला।

(२) **अब्याकृत** - वगैर सफाई के या बातिन में काम करने वाला

(३) **विराट** - बड़ी सूरत यानी ज़ाहिर में हज़ारों अज़ू वाला

(१) **विराट** - ' ब्रह्म की पहिली जागृति अवस्था यानी बेदारी की हालत है जिसमें वह जगत की ज़ाहिरी रचना करता है और बेशुमार ज़ाहिर ज़हूर शक्लें और सूरतें गढ़ता है, जो इसमें गुथी या पिरोई हुईं रहती हैं

और चूँकि इन सब का ज़हूर अपना मन होता है और यह उसी में रहते हैं और उसी से मिले-जुले होते हैं। उस नज़र से शास्त्रों ने इसको हज़ार सर वाला और हज़ारों हाथ वाला कहा है। विराट का लगवी मतलब वि (पहिले) रट(आवाज़ देना) है।

(२) अव्याकृत - ब्रह्म की दूसरी स्वप्न अवस्था यानी सोने की हालत है। इसमें वह जगत की वातिनी तौर पर ख्याल रचना करता है और यह रचना उसी के अन्दर होती है और चूंकि यह नज़र नहीं आती, इसलिए इसका नाम इस ख़ास रियायत की वजह से अव्याकृत है। इसका लगवी मतलब नज़र न आने वाला अ-(नहीं) व्यक्त (ज़ाहिर) कृ (करता) है।

(३) **हिररायगर्भ** - ब्रह्म की तीसरी सुषुप्ति अवस्था यानी गहरी ग़शी गहरी नींद और गहरी महिनियत की हालत है। इसे लै भी कहते हैं। इस हालत में ब्रह्म अपनी रचना को समेट कर अपने अन्दर ले लेता है और खुद सोने के अराडे की सूरत में गोल मोल कैफियत में चला जाता है। हिरराय गर्भ के लगवी मानी सोने के अराडे के हैं। हिरराय (सोना) गर्भ (अराडा) बीज है।

यह तीन हालतें ब्रह्म की हैं और चूंकि इनकी समझ हमको सिर्फ़ माया से आती है, इसलिए माया की अहिमियत है। ब्रह्म की यह तीनों सूरतें माया ही के मातहत हैं और वह ही ब्रह्म को इस तरह गढ़ती रहती है।

आदि यानी इब्तदाई और कारन माया में जो सत पुरुष यानी इन्सान कामिल का अक्स पड़ा उससे पारब्रह्म या महाकाल यानी काल पुरुष का वज़ूद ज़हूर में आया। और लतीफ़ माया में जो परब्रह्म का अक्स पड़ा उससे ब्रह्म का ज़हूर हुआ। ईश्वर का लफ्ज़ निहायत मुअज्ज व मुवहम और ग़ैर वाजह लफ्ज़ है।

ब (बढ़ना) और मन (मनन पर ग़ौर करना) जिसमें बढ़ने और सोचने का वस्फ़ है। वह मायावी या माया का बना हुआ है। जिस तरह से कि उसी के अहंकार से तत्व यानी अनासिर पैदा हो गए उसी तरह उसकी वासना से जीव पैदा हो गए। वासना संस्कृत लफ्ज़ वासना है। उसका आधा वसन है जो कपड़ा कहलाता है। इसलिए हिंदी जबान से कई लफ्ज़ मसलन वासन (बर्तन) वगैरह निकलते हैं। वासना या आबाद होना भी इसी से मुराद है वगैरह -वगैरह। ब्रह्म में चूंकि बढ़ने और ग़ौर करने की काबिलियत थी और वह असिलियत से कई मंज़िल नीचे उतर आया था उसमें बढ़ते और ग़ौर करते हुए बढ़ते रहने का वास्ता मौज़ूद होना कोई अज्जुब की बात नहीं है। उसने ख्वाहिश की कि मैं बढ़ूँ। पहले उसने अपने को दो हिस्सों में तक़सीम करके तजकीर और तानोस का जामा पहिनाया और उसने बैल, गाय, भेड़, बकरी, वग़ैरह चरिन्द -परिन्द, दरिन्द,,कीड़े, मकोड़े,

भुनगे वग़ैरह बेशुमार जीव पैदा होने लगे और परब्रह्म सबके कालिमों ने खुद ही बसा और यह मखलूक जो नज़र आती है और जो नज़र नहीं आती है सब उसी की अक्सी सूरतें हैं। वह ही सब में है और सब उसी के हैं। यह रचना ब्रह्म ही की है और ब्रह्म के आधार पर होती है और सब में ब्रह्म ही समाया हुआ है। क्योंकि उसमें फितरतन बढ़ने-फैलने और सोचने का माद्दा था और जिस तरह यज्ञ करके आदमी यज्ञ की सामग्री (सामान) की आहुति दे देकर उसे धुएं की सूरत में हर जगह बिखेर देता है। वैसे ही उसने भी यज्ञ किया और अपने आप का यज्ञ किया और उस यज्ञ में अपने आप की आहुति दी और वह ही सबमें फैला हुआ है। इस यज्ञ के नतीज़े को देखकर वह खुश तो हुआ लेकिन असली ख़ुशी उसको हासिल नहीं हुई क्योंकि उसने इस रचना में कमी महसूस की। तब आखिर में सोचने के बाद उसने मजमूड़ल सिफ़ात इंसान को पैदा किया जो सतपुरुष के आकार का बनाया गया और उसे देखकर वह बहुत खुश हुआ और अब से अफ़ज़लुल मख़्लूक़ और अशरफुल खिल्क़त का ख़िताब दिया और अपनी तमाम रचना को उसके मातहत कर दिया। यह ख़ास वजह है कि इन्सानी ग्रोह सबसे ज़ियादा मुम्ताज़ है। यह ही ब्रह्म यज्ञ है। ब्रह्म अपने आप की करबानी करके सब में फैले और सबका होकर रहे। इंसानी तबके के लोग अक्सर सिफ़ली जजबाल के होते हैं इसलिए बजाय इसके कि वह अपने हैवानियत के माद्दे को को बलिदान कर दें, जानवरों की क़ुरबानी करते हैं। हैवानियत के माद्दे को क़ुरबान कर देने से इन्सानियत और रूहानियत की लताफ़त पैदा होती है। इन्सान अव्वल था और इन्सान ही आखिर है।

ब्रह्म की रचना सतलोक की रचना की नक़ल है। अक्स हमेशा उल्टा होता है। इन्सान हैवान की उलटी शकल है। दरख्त की मिसाल इसकी मुशावह है। और हैवान में तो आत्मा मामूलियत यानी दबी हुई हालत में है लेकिन इन्सान की आत्मा खुलकर खिलता है। आत्मा संस्कृत जवान के दो लफ़्ज़ों से निकला है। आत (हरकत करना) मा (मनन - सोचना) - जिसमें हरकत और ग़ौर करने का माद्दा हो वह आत्मा है। आत्मा के गुण- इच्छा (ख्वाहिश) सुख-दुःख , ज्ञान, प्रयत्न, मुहब्बत, राग-द्वेष (रगवत -नफरत) यानी लक्षण और तारीफ़ हैं।

देवता

देवता संस्कृत लफ्ज़ देव से निकला है। देव का माद्दा है ' दद ' खेलना - जो खेल करे उसका नाम देवता है। देवता मुश्तक़ लफ्ज़ है जो देव से निकला है। देवता ईश्वरी वज़ूद और ईश्वर पने को कहते हैं। देव के मजाजी यानी बेशुमार हैं मस्लन - फरिश्ता, राजा, शौहर का भाई। आम तौर पर तो देवता वस्फ़ मुजस्सिम को कहते हैं जो सत, रज और तम की जिस्म रखने वाली शख्सियतें हैं या ताक़तें ब्रह्म या इंसान की इन्द्रियों से मख़्सूस हैं। यह देवता हैं और जो बच्चों यानी अनासिर के मुवक्किल या अधिष्ठाता है, वह भी देवता ही हैं। जिस वक्त ब्रह्म के अन्दर छोभ या हरकत हुई उसमें तीन खसूसियतें थीं - सत (होना) रज (करना) तम (अंधकार) में आना। और ब्रह्म के छोभ होने इनकी वजह से तीन सूरतें इख़्तियार कर लीं जो ब्रह्मा, विष्णु और महेश कहलाती हैं। विष्णु सतोगुण हैं, ब्रह्मा रजोगुण हैं, और शिव तमोगुण हैं। यह तीन देवता पहिले ब्रह्म के गुणों से ज़हूर में आये और वैसे ही इन्सान के जिस्म में भी दाखिल हुए। क्योकि इन्सान का जिस्म ब्रह्म की काया की तरह त्रिगुणात्मिक यानी तीन गुणों वाला है फिर चूंकि ब्रह्म आय शरीर धारी और मुजस्सिम है उसमें इन्सान की तरह चौदह इन्द्रियां हैं। इन चौदह इन्द्रियों के अन्दर जो मुजस्सिम ताकतें रहती हैं वह देवता कहलाती हैं। फिर चूंकि अनासिर में भी कुदरती ताकतें हैं उन पर शुमार भी देवताओं में है जैसे पानी का देवता वगैरह।

उपनिषदों ने आमतौर पर ३१ देवताओं को ख़ास मान कर बाक़ी को नज़र अंदाज़ कर दिया है और उनको ३१ कोटि यानी ३१ किस्म के देवताओं का ख़िताब दिया है।

देवताओं की ३ किस्में हैं:- **(१) रुद्र (२) वसू(३) आदिल।**

(१) **रूद्र** का लफ़्ज़ी मतलब रुलाने वाले से है। जो रुलाता रहे उसे रुद्र कहते हैं। यह ग्यारह हैं। यह शिव भगवान के मुख़तलिफ़ रूप हैं जिनके मुत्तलिक सिंघार यानी मिटाने या महब करने का काम है। यह आम तौर पर पाँच ज्ञान और पाँच कर्म इन्द्रियां और ग्यारहवीं मन की जायल होने की ताक़तों से मुराद है। जब यह कमज़ोर या बर्बाद हो जाते हैं तब इंसान रोने लगता है। इनके नाम है :-१। उन जैकीड़, २। अधिवर्धन ३। विरद पक्ष ४। उरन तुरा ५। ज्यग्यता ६। भूरूप ७। त्रयभक्ति ८। अपराजीत ९। सावित्त १०। हर वगैरह।

(२) **वसू** कहते हैं आबाद होने की जगह को। इनके नाम हैं :- १। विहू २। वरू ३। सोम ४। विशव

५। अवल ६। वितल ७। परउभर ८। प्रवाह मनन।

(३) **आदिल** - सूरज या सूरज की चमकती हुई सूरतों को कहते हैं। । यह तादाद में बारह हैं। चूंकि साल के बारह महीनों में सूरज बारह तौर पर चमकता है, इनके ज़हूर और तर्ज़ ज़हूर का नाम आदित्य रखा गया है।

पंचदेव की रियायत इंसानी जिस्म के पांच चक्रों की नज़र के हैं। वह ये हैं - १। गुदा (मुक़अद)

२। इन्द्रिय (आले तनासुल) ३। नाभि (नाफ़) ४। ह्रदय (दिल) ५। कराह (गला)। इनके अन्दर जो मुवक्किल या देवता बसते हैं या उन स्थानों को ताक़त तक़वियत और ज़िन्दगी देते हैं।

वह पाँच किस्म के हैं। इनके नाम गणेश, ब्रह्मा, विष्णु, शिव और दुर्गा हैं।

गणेश जी के रहने की जगह गुदा (मक़अद) ब्रह्मा जी का स्थान लिङ्ग इन्द्रिय या आला तनासुल है। विष्णु का क़याम नाभि (नाफ़) शिव जी का मुक़ाम ह्रदय और दुर्गा देवी का रहायश कंठ यानी गले में है। जब ब्रह्म वासना के ज़र असर आया उसमें शब्द का ज़हूर हुआ। इसी शब्द से आकाश पैदा हुआ फिर उस आकाश से और तत्व बाक़ायदा पैदा हुए और एक के बाद दीगरे पैदा हो हो कर ब्रह्म में स्थान बना-बना कर क़ायम हुए और ब्रह्माण्ड में अपनी मख़सूस हैसियत हासिल की। ब्रह्माण्ड नाम है ब्रह्म के अण्डे का या ब्रह्म के जिस्म का। यह जिस्म तत्वों का बना हुआ है और वह तत्वों की ही अन्तराजी और आयेनिर्ण सुरत है।

यह इस लोक में सबसे बड़ा है। अगर कोई शख्स ब्रह्म को समझना चाहे तो सिर्फ़ इंसानी जिस्म का मुताला करें। इंसान सिर्फ़ अपने आपको मुताला करे।

जाप ब्रह्म है वह ही मृत्यु लोक यानी आलमे फ़ानी में इंसान भी है। दोनों ही में इकसानियत है। सिर्फ़ पैमाने का फ़र्क़ है। पैमाने को नज़रअंदाज़ कर देने से फिर दोनों ही एकसां प्रतीत होने लगते हैं और ज्ञान हो जाता है।

फिर ब्रह्म में चूंकि बढ़ने और सोचने की बासना प्रगट हुई, यही बासना बीज रूप बनकर माया के गर्भ में दाखिल हुई और इसमें ब्रह्म पैदा हुआ और साथ ही साथ उस ब्रह्म के खेल इज़हार और जहूर के सिलसिले में तमाम तत्व कसीफ़ सूरतों में पैदा होकर उसके जिस्म के बनाने में मददगार हुए और उसके जिस्म में आ आ कर

ठहर गए। यह माया तमाम तत्वों की जड़ और माता है। तत्व या अंसर वातिन और ज़ाहिर तरीक़े में उसी में रहते हैं और मौक़ा पाकर प्रगट हो जाते हैं।

निस्बती नुक़ते निगाह के हम पारब्रह्म को ऊपर और माया के नीचे कहते हैं। पारब्रह्म की वासना ऊपर थी, माया का गर्भ या वतन नीचे था। वह उस गर्भ में समायी जिसकी वजह से ब्रह्म हिरण्य गर्भ कहलाया। वाय में वासना रहती है जो उसके दिमाग़ या दिल के बालाई हिस्से से तअल्लुक़ है और माता में माया या माद्दा रहता है जो उसके नीचे के हिस्से पर रहने या वतन में क़ायम है।

बढ़ना और सोचना ज़िंदगी का खास्सा है और इसलिए इस रियायत से ब्रह्माण्ड ही वजूद को ब्रह्म का नाम ऋषियों ने दिया है।

पहिले ब्रह्म का सर बना जैसे इंसान का सर पहिले बनता है और लतीफ़ व कसीफ़ अनासिर ने खिंच कर ऊपर के हिस्से में लतीफ़ सूरत में जगह बनाई और वहीं उसमें क़ायम हो गए। इस वास्ते ब्रह्म या इंसान के सर में तमाम हवास का मदारइलह बन जाता है जितनी ज्ञान इन्द्रियां हैं सबको सर में लतीफ़ होने की वजह जगह मिली है। फिर तत्वों ने नीचे की तरफ रुख किया क्योंकि नीचे आये हुए वग़ैर उनके इज़हार की यकीनी ज़ाहिरी और प्रगट सूरत नहीं बनती यह बतदराज क़ायदे के साथ नीचे उतरने लगे।

पहिले आकाश का स्थल हिस्सा उतरा उससे गला या हलक़ बना और वह इसमें जाकर क़ायम हुआ।

कण्ठ इसलिए आकाश का इस जिस्म में स्थान है। उसका लतीफ़ अंग या हिस्सा तो ऊपर है। यहां क़सीज़ या स्थूल हिस्सा है। कुदरती इज़हार का यह उसूल है की लतीफ़ शै हमेशा ऊपर रहती है और कसीफ़ शै नीचे उतर आती है। पानी के ऊपर भाफ़ मडलाती है और पानी की तह के नीचे तलछट बैठ जाती है और पानी बीच में रहता है। यही कैफियत तमाम तत्वों की है। सबके तीन-तीन रूप हर जगह नज़र आयेंगे और यह इस वजह से है कि तीन गुण - सत, रज, तम - हर जगह मुहीत होकर अपना काम करते हैं। यह दुर्गा आदि शक्ति है। इसी का नाम वासना है। वासना कठिन है। इसलिए यह नाम उसको दिया गया। यह संस्कृत माद्दा दुर (कठिन) और गम (जाने) से निकला है। चूंकि वासना अच्छी नहीं समझी गयी और इसी के गोरखधंधे से जगत बना है इस वजह से यह नाम दिया गया।

दुर के मानी बद या बुरे के भी हैं। यह वासना बुरी है। वासना से ही आकाश पैदा हुआ है। यह दुर्गा इसी आकाश तत्व की अधिष्ठाता है मदार इलह अधिष्ठाता और मवक्किल है और आदि शक्ति कहलाती है। ब्रह्म के कंठ

में जगमगाती हुई और फिर इंसान के जिस्म में भी वही जगह अपने लिए मुक़र्रर की। आकाश में जब मथन हुई तो उससे वायु तत्व यानी हवा का असर निकला और वह ह्रदय यानी दिल के मुकाम में जहाँ फेफड़े के पंखे झलने से हवा बरामद होती है वहां ठहरा। यह मुकाम वायु मण्डल कहलाता है। इसके मवक्किल अधिष्ठान या मदार इलह शिव भगवान हैं। मथन मथने या बिलोने को कहते हैं। चूँकि ब्रह्म ने इब्तदा में दो सूरतें इखित्यार कीं थीं (१) पुरुष (२) प्रकृति यानी तज़्कीर और तानीस और इनमें से एक अस्वात है दूसरी नफ़ी। इस वजह से लाज़िमी था कि उसका अक्स तत्वों में पड़ता और ऐसा ही हुआ।

आकाश के नफ़ी और असवात पहिलू आपस में मर्द और औरत की तरह हिले और मिले और इनके हिलने और मिलने से लड़के की सूरत ने हवा के वजूद ज़हूर में आया। लतीफ़ हिस्सा तो आकाश में आकाश के साथ रहा और कसीफ़ नीचे उतर कर ह्रदय चक्र में ठहरा और अपना काम करने लगा।

इस ब्रह्माण्ड में और ब्रह्माण्ड की अक्सी और नक़ली सूरत पिण्ड में शिव जी की बड़ी महिमा है, शिव जी का काम सिंघार करने का है। सिंघार नाम है लै का महिवियत का और बेखुदी का जिसका रूप यह हवा है। यह खुश्क करता है और रतूवत को जायल करता है। इस वस्फ़ की रियायत से शिव जी को वायु (हवा) का मवक्किल मदार इलह कहा गया है।

चूंकि यह कैफियत ह्रदय चक्र में प्रकट होती है वायु ने ह्रदय चक्र यानी दिल के गुर्दे में क़ायम करने का बाद अपने असवात और नफ़ी के पहिलुओं को मथा। इस मंथन से आग पैदा हुई और इसने पिण्ड देश के नामी चक्र में (नाफ़) में अपनी जगह बनाई। इसका कारण भाग (असली या बरक़ी हिस्सा) तो ह्रदय में रह गया लतीफ़ नाभि में आकर ठहरा और कसीफ़ हिस्सा नीचे उतरा। मवक्किल इसके विष्णु भगवान हैं। एड़ी से चोटी तक सबको हरारत की ग़िज़ायत पहुँचाते हैं। यह पालने-पोसने वाले हैं।

आग के मंथन यानी विष्णु और लक्ष्मी के मेल से जल निकला जिस तरह कि आग के जलने पर भाफ धुएं की सूरत में निकलता है। इस तरह आग से जल यानी पानी का ज़हूर हुआ। इस नल ने इन्द्रिय चक्र पानी आले तनासुलके मुक़ाम पर बैठकर अपनी जगह बनाई और वहां से नहर की नाली की तरह निकलता रहता है। इसके अधिष्ठाता ब्रह्मा जी हैं। पानी से ही जीव जंतु पैदा होते हैं और ब्रह्मा जी उसी आले तनासुल के मुक़ाम पर बैठ कर सब की नज़र आने वाली सूरतें कुम्हार की तरह गढ़ -गढ़ कर निकलते रहते हैं।

इति शुभम ॐ ॐ

ॐ

अन्धा देखे अद्भुत लीला, देखे पार न पावे

गूँगा बोले अदभुत बानी, बोला गूँगा बन जावे

कानून क़ुदरत ऐसा ही है। यह रचना तीन गुणों वाली है - सत, रज और तम।

(१) तम में भाव प्रगट पना-उत्थान (इज़हार) और बृद्ध है।

(२) सत में सिमटाव, अप्रगट पना, अदम और महिबियत लेकिन अदम और अप्रगट पना को भूल भी नेस्ती न समझना चाहिए वरन धोखा हो जायेगा। वह हस्ती की सिर्फ़ सिमटाव की कैफियत है। सिमटाव अदम नेस्ती नहीं है।

(३) इस उत्थान, सिमटाव, प्रगट और अप्रगट पना, भाव , अभाव , बूद-अबूद, वगैरह के नज़ारों को देखने वाला नाज़िर (रज) की मशमूली हालत है जो सत और टीम की गाँठ और जड़ और चेतन की गिरह है।

तम माद्दा है, सत रूह है और रज दिल है। यह कैफ़ियत ब्रह्माण्ड यानी आलम क़बीर में भी है और पिण्ड यानी आलम सग़ीर में भी है।

दोनों जगह एक जैसा नक़्शा है जिस तरह हम अपने जिस्म में जागते वक्त उठते और गहरी नींद में सिमटते और सोने के वक्त ख्वाव देखते हैं। इसी तरह का एक वज़ूद अज़ीम भी है जो बिलकुल ही व्योहार करता है और करता रहता है। इसी वज़ूद आज़म को ऋषि ब्रह्म कहते हैं सूफ़ी ख़ुदा अज़ीम कहते हैं। सिर्फ ज़िस्मानियत-क़ामत का फ़र्क़ है। इसके लिए जीव और मुतनफ़िफ़स की इस्तलाह स्तैमाल नहीं करना चाहिए।

जीव तो छोटी मखलूक कहलाती है। वह वज़ूद अज़ीम भी दिल है जड़ और चेतन की ग्रंथि है।

लोग साफ़-साफ़ कहते हुए डरते हैं। वह वज़ूद अज़ीम ब्रह्म (१) जड़ और चेतन की ग्रंथि है (२) सत और तम की रजोगुण मशमूली कैफ़ियत है। (३) हमारी और तुम्हारी तरह जागना - सोना और लै यानी महवा होना है। (४) हमारी तरह व्योहार भी करता है। (५) अलबत्ता वह बड़ा है हम छोटे हैं वग़ैरह।

महदूद, मुहीतकुल-सर्वज्ञ-सर्व व्यापक और सर्व अन्तर्यामी हैं, यह फ़र्क़ है। हमारा नाम जीव है उसका नाम ब्रह्म है। ऋषि उसको समझे थे इसलिए उसका नाम ब्रह्म रखा। इसके मानी पर ग़ौर करो। ब्र मानी बड़ा और मन यानी दिल याने बड़ा दिल वाला ही ब्रह्म है।

नवी के पैरोकार सूफ़ी उसको इसी नाम से मौसूम नहीं करते थे। बेहतर स्तलाह की अदम मौज़ूदगी में उसको खुदारंजू कहते थे लेकिन इशारात समझने की अक़्ल उसमें भी थी। सोचने वाला जब होगा मन ही होगा लेकिन ब्र के मानी बड़े और बड़े होने वाले के भी हैं। वक्त- वक्त की बात है। इसलिए समझो कि ब्रह्माण्डी मन ब्रह्म है और पिण्डी मन जीव है। वह आसमानी दिल है और यह ज़मीनी दिल है। वह एक है, यह अनेक हैं। वह सबका मजमुआ है, यह अलग-अलग टुकड़ा-टुकड़ा हुआ है। जीव मूढ़ है, जीव अज्ञानी है। जीव ज्ञानी भी होता हुआ जीव चंचल भी रहता है। ब्रह्म मूढ़ है, अज्ञानी है। ब्रह्म ज्ञानी है और चंचल है। यह औसाफ़ अगर ब्रह्म में न होते तो जीव में भी न होते। ब्रह्म ही साकार यानी जिस्म वाला है। जब ब्रह्म को ब्रह्माण्डी मन कह दिया है तो मन या दिल तो ख़ुद जिस्म हो गया या नहीं।

जिस्मानियत के बस्फ से वह ख़ाली और महरूम कैसे रह सकता है। यह जिस्म मादिवत का (अंसरी कालिब) तुम्हारा स्थूल शरीर है। यह ब्रह्माण्ड माद्दे का तूदा (कायनाद) ब्रह्माण्ड का स्थूल जिस्म है और मादियत की नज़र से ऐसा ही है। यह दिल मन (पिण्ड अण्ड) तुम्हारा सूक्ष्म शरीर है। इसी कायनात की मजमूई ख़यालात कर ज़ख़ीरी की गिरह (ब्रह्माण्ड) ब्रह्म का सूक्ष्म शरीर है। यह रूह ठहराव की असल जगह (बीज रूपता) तुम्हारा कारण शरीर है। इस कायनात की सकून का मदारइलह (ब्रह्म लै अवस्था की बीज रूपता) ब्रह्म का शरीर है।

अब दोनों के रूप हो गए तो इनके नाम भी हो गए। स्थूल शरीर यानी कसीफ़ जिस्म से तअल्लुक़ रखने वाले जीव को शास्त्र विश्व का नाम देते हैं। विश्व का मतलब जुज़ तजुर्मा ज़मीनी है। सूक्ष्म शरीर मानी ख्व्वाह दिल से तअल्लुक़ रखने वाले जीव को शास्त्र तेजस का नाम देते हैं जिसका मतलब जुज़ तजुर्मा चंचल है। कारण शरीर यानी रूह से तअल्लुक़ रखने वाले जीव को शास्त्र प्राज्ञ का नाम देते हैं जिसका मतलब जुज़ तज़ुर्मा शास्त्र ' सकूत' है। प्राज्ञ का तजुर्मा इस मौके पर ज्ञानी है। रूह में या कारण शरीर में ज्ञान नहीं होता। यह जीव के नाम थे जो तीन ज़िस्मों के तअल्लुक़ के थे। अब ब्रह्म के नाम सुनो।

(१) स्थूल शरीर यानी कसफि जिस्म से तअल्लुक़ रखने वाले ब्रह्म को शास्त्र विराट कहते हैं जिसका मतलब जुज़ तजुर्मा बलन्द आवाज़ है।

(२) सूक्ष्म शरीर यानी दिल से तअल्लुक़ रखने वाले ब्रह्म को शास्त्र अन्तर्यामी कहते हैं। अन्तर्यामी का मतलब जुज़ तजुर्मा वातिनी है - या नज़र न आने वाला कामिल है।

(३) कारण शरीर यानी रूह से तअल्लुक़ रखने वाले ब्रह्म को शास्त्र हिरण्य गर्भ कहते हैं जिसका मतलब जुज़ तजुर्मा सोने के अण्डे की शक्ल में साकिन रहने वाला है। यहां भी ज्ञान की कोई नहीं है।

यह ब्रह्म के तीन नाम जीव की नज़र से तीनों देह की रियायत और तअल्लुक़ से बताये गए हैं।

ब्रह्म ब्रह्माण्डी दिल यानी कायनाती दिल को कहते हैं और तुम्हारे दिल की भी यही तारीफ़ है।

अज्ञानी - वेदान्त काण्ड - वेद के आखिरी हिस्से पर विचार।

अज्ञान - जो ज्ञान को मुराद समझता हो वह अज्ञान

अगर इसको यही समझ नहीं होती तो अज्ञानी क्यों कहलाता। " तत्वहम " तत तो हम -- इसको मूढ़ कहते हैं। अज्ञानी के मानी समझ से ख़ाली के नहीं है बल्कि जो ज्ञान की मुराद से ख़ाली है - वह अज्ञानी है और वह ही ज्ञान का मुस्तहक़ भी हो सकता है या होगा। जिस तरह कि भूखे को रोटी का, प्यासे को पानी का और मरीज़ को दवा का अधिकार है - वैसे ही अज्ञानी को भी ज्ञान का हक़ है और उसके लिए ज्ञान है। भूखा रोटी से महरूम है लेकिन रोटी की समझ से महरूम नहीं है। यह समझ-बूझ उसमें है। ऐसे ही अज्ञानी में ज्ञान का माद्दा तो मौज़ूद है लेकिन उसमें ज्ञान नहीं है।

ज्ञान - कहते हैं फ़िक्र - सोच विचार - खुश तमीज़ी को। इसके सिवा ज्ञान और कुछ नहीं है। चीज़ों का फ़र्क़ जानना, उनके दर्मियानी तमीज़ी ख़त और तमीज़ी मद खींचना यही ज्ञान है। और यह दिल का खास्सा है। तमीज़ का नाम विवेक और विचार है।

जब दिल से दो मुख़्तलिफ़ हालतों के दरमियान कायम होता है तब उसमें विचार फुरता है। विचार की जगह मिलौनी के इहाते में है - और वहां उसमें और उस पर बैठकर सोचता और विचारता है।

ज्ञान का मक़सूद सिर्फ़ ग़ौर व तमीज़ ही तमीज़ नहीं है - बल्कि और कुछ भी है। हर काम का कोई न कोई प्रयोजन ज़रूर होना चाहिए - वग़ैर इसके कोई काम नहीं होता। अगर गौर करने वाला सिर्फ बातों के चक्कर में पड़ा है और उसके नतीज़े से फ़ायदा न उठावे तो वह एक अज्ञानी है। अज्ञानियों के दर्मियान उसका दर्ज़ा बड़ा ज़रूर है - लेकिन अभी तक वह ज्ञान से ख़ाली है, क़ुरबत होता हुआ - ऐसे ज्ञान को हम वाचक ज्ञान और ज़बानी जमा-खर्च वाला ज्ञान कहते हैं।

किताबों को पढ़ कर, तक़रीर को सुनकर और उनकी राय उचित लेकर उनके सनद और हवाले तक अपने आपको महरूम रखता है और तोते के रटन के मानिन्द दोहराता रहता है और इन्हें अपना नहीं बनाता। इसके ज्ञान को हम वाचक ज्ञान कहते हैं।

जो शख्स ज्ञान की मुराद को समझकर, उसे अपना बनाकर, उसका अनुभव करके, उस पर कुछ देर के लिए क़ायम भी होता है और ज्ञान की मुज़म्मिली ज़िंदगी बसर करता है, उसके ज्ञान को हम यथार्थ ज्ञान यानी सच्चा ज्ञान कहतें हैं।

आदर्श-मरौज और इष्ट पद ज्ञान न है और न हो सकता है। ज्ञानी अधर में है, कभी इधर कभी उधर। अधर में रहने वाले को चैन कभी नहीं।

इससे तो कर्म करने वाले मूढ़ और ज्ञान की असलियत से महरूम एक तरह पर नुक़ते निगाह से अच्छे कहे जा सकते हैं।

दुनियाँ, उक़वा और उक़वा के तमाम मसापल और व वाक़यात हैरत में डालने वाले सामान हैं। दुनियाँ मुक़ाम हैरत के अलावह वह मुक़ाम हज़रत भी है। सतसंग का लुफ्त फ़ायदा और मक़सद यह ही है कि हर शै की उसकी जगह पर अहिमियत दिखाकर फिर मुशावही पहलू नज़र में लाकर दिल को वसीअ कराया जाए।

अब यहाँ पर सबाल यह होता है कि अगर ज्ञान मैराज तमन्ना नहीं है बल्कि मैराज सुख व सहूर महज़ है तो क्या आदर्श या मैराज मुक्ति और नजात है?

अगर ज्ञान से सुख नसीब होता है तो वह ज्ञान का फल है और फिर ज्ञान की हैसियत कर्म की हो गयी। शास्त्र कहते हैं कि कर्म की जजा और सजा जहूर मिलती है। अगर ज्ञान का प्रयोजन सुख हुआ तो यह ज्ञान का फल ठहरा। ज्ञान कर्म की तरह मज़दूरी हो गयी और कर्म से ज़ियादा उसकी बकअत नहीं रही। लेकिन कर्म

अधिकार बताया है और ज्ञान की महिमा का गीत गाया है। उसका जबाब यह है कि एक तरह पर कर्म और ज्ञान दोनों ही सचमुच एक किस्म के फेल या कृपा ही है। कर्म जिस्मानी और शारीरिक फेल है। ज्ञान दिली या मानसिक फेल है। कर्म का मतलब है करना और ज्ञान का मतलब है जानना। ज्ञान की सरीह तलफ़्फ़ुज़ संस्कृत में ज्ञान है जो जना माद्दे से मुशफिक हुआ है और हमारी जवान का लफ़्ज़ मुस्तैमला जनाता है। माद्दा जना से ज्ञान निकला है।

दूसरी बात यह है कि सुख कर्म या ज्ञान का फल ही सही, मुमकिन है कि इसमें कुछ गलत फ़हमी और गलती भी हो। दिल के राग न समझने की वजह से ऐसा समझ में आ रहा है। सुख वतौर ख़ुद हस्ती मुतलक़ है और दुःख वग़ैरह तमज़रा महज़ है।

वाजों ने इसी ज्ञान ही को आदर्श मान लिया और खामोश हो रहे और बाज़ों ने मुक्ति को। अब ज्ञान और मुक्ति का फ़र्क़ मालूम करना चाहिए। (१) ज्ञान जानने का नाम है, ऐसे जानने का कि जानते हुए भी जानी हुई चीज़ से ममानियत हो जाये और जानना ही जानना रह जाये। जैसे तदाकार की सूरत कही जा सकती है। (२) मुक्ति छुटकारा पाने को कहते हैं, किसी कैद बन्दया शर्त की हालत से नज़ात पाना ही मुक्ति है। यह दोनों हालतें दिल या मन से मुत्तल्लिक़ हैं। मन ही अनुभव करता है, मन ही क़ैद और नज़ात को मानता और महसूस करता है। यह मानना और महसूस करना ज्ञान ही है।

जब दिल अपने आपको ज़ाहिल मानकर इल्म या ज्ञान के शौक़ में कोशिश करता हुआ जानने पर हावी हो जाता है और जान जाता है तो उसको ज्ञान कहा जाता है। वैसे ही किसी हालत को नाखुशगवार तस्लीम करके उससे परेशान होता है तो वह क़ैद बन्द या बन्धन में है और जब उससे रिहाई की फिक्र में मेहनत करता हुआ इस पर ग़ालिब आ जाये तो इसी हालत का नाम मुक्ति है और नज़ात है। जैसे ज्ञान-अज्ञान दिल की हालतों के नाम हैं, वैसे ही बन्द नजात का भी दिली अहिसास से तआल्लुक है। बन्ध और युक्त दोनों फ़र्ज़ी और ख़याली दिल की मानी हुईं बातें हैं। (१) इसी तरह जब इसका गहरा तअल्लुक़होता है तो यह मूढ़पना रहता है। (२) शरीर और अपने ख़ास तअल्लुक़ से काम करता हुआ यह अज्ञानी और चंचल होता रहता है। (३) और दुनियावी जिस्मानी और जमीनी कारोबार के सिलसिले में अक़्ल व तमीज़ से काम लेता हुआ अक़्लमंद होता है। सबकी समझ रखता हुआ अपनी ख़ास समझ से महरूम के वापस अज्ञानी कहिलाता है और फिर जब तजर्वे की वसअत से यह अपने रिश्ते को ढीला करके रूह से तअल्लुक़ पैदा करने लगता है और दीन- दुनियाँ, लोक-परलोक और जमीनी-आसमानी ख्यालात के कुलावे मिलाने लगता है, तब यह ज्ञानी कहलाता है और दोनों में

एकसा तौर पर वर्ताव करता हुआ किसी के गहिरे असर को अपने ऊपर गालिव नहीं आने देता और तराज़ू के पल्ले को बराबर रखता है। वह शांत है। जिसने दिल को समझ लिया उसने रूह को और सब कुछ समझ लिया। मैराज जब होगी ख़याली ही होगी और दिल से ही उसका तअल्लुक़ रहेगा। जो शै कि सोचने,समझने, जानने, मानने और यक़ीन करने के क़ाबिल है वह सब मन ही के मुतअल्लिक़ है। कौन सा ऐसा तबक़ा है जो दिल की सैरगाह नहीं। इस मन के बेशुमार घाट तबक़ात और काम करने के स्थान और मुक़ाम हैं। इसमें से इस वक्त सिर्फ तीन घाटों की बाबत ज़िक्र किया जाता है। यह घाट दिल के तीन बाब ही हैं, दिल की किताब के तीन मुख़्तलिफ़ नाम हैं।

(१) दुनियावी (२) दर्मियानी (३) उलवी ख्वाह

(१) निचला (२) निचला (३) ऊंचा ख्वाह

(१) जिस्मानी (२) दिली (३) रूहानी

पहला बाब कसीफ़ जिस्म है दिल की किताब की इब्दता है। दूसरा बाब दिल है जो दर्मियानी है। तीसरा बाब रूह है जो उल्बी है।

कसीफ़ जिस्म या स्थूल शरीर माद्दे का वह तबक़ा है जहाँ जल्दी जल्दी तब्दीलियां होती रहती हैं।

दिल या सूक्ष्म शरीर माद्दे का वह तबक़ा है जिसमें तब्दीली के साथ कुछ क़याम भी है।

रूह पर कारण शरीर माद्दे का वह तबक़ा है जिसमें निस्बतन ज़ियादा क़याम सकून और क़रार की हालत है। यह ही मन के घाट हैं।

जब मन बिलकुल कसीफ़ जिस्म पर बैठता है तो उसे निस्बतन ज्यादा महसूस होता है क्योकि उसको मजबूरन हाल में कसरत में बेहतर और बरतर सामान का मुक़ाबिला करते रहने से दुःख ही दुःख मान (गुमान) होता रहता है और हसद बुग्ज़ अदावत रश्क़ और बेहतर हालात में जाने और तरक़्क़ी करने के जज्वे को उभार (नश्वनुमाँ) का सामान मिलता रहता है।

जब मन आप अपने तबके मुकाम या स्थान पर बैठता है तो उसमें गौर फ़िक्र सोच-विचार ,नतीजा निकालने, फैसला करने और फिर नतीज़े पर क़ायम होने का मौका हाथ आता है। शास्त्रकारों ने इसकी चार

सूरतें क़ायम की हैं। (१) चित्त - दिल पर ख्याली जरव का लगाना (२) मनन - ग़ौर करना (३) बुद्धि - फैसला करना (४) अहंकार - फैसले पर क़ायम होना।

यह दिल का अपना दर्मियानी तवका है जिसमें दुःख और सुख दोनों की कैफियत है। जब यह मन दोनों तवकात से चढ़कर रूहयानी कारण शरीर के घाट पर बैठता है तो उसको सकून करार शांति और सलामती सुख मिलता है।

यह मन के तीन घाट हैं - सिफ़ली, दर्मियानी और उलवी। सिफ़ली मन का नीचा, दर्मियानी मन का अपना और उलवी मन का ऊंचा घाट कहिलाता है। (१) मूढ़ (२) चंचल (३) अज्ञानी (४) ज्ञानी (५) शान्त या सुखी।

इस तुम्हारे जिस्म के अन्दर जो निचला और सिफ़ली तबक़ा इस मूढ़ का होता है वह हलक़ से शुरू होकर नीचे और ऊंचे मुहति हो रहता है।

चंचल मन का तबक़ा ह्रदय चक्र में ख़ास तौर पर होता है। अज्ञानी का तबक़ा ह्रदय-गला-आँखों तक ख़्वाह लतीफ हवास या ज्ञान इन्द्रियों तक है।

ज्ञानी का तबक़ा ह्रदय-गला-आँख और पेशानी तक ही नहीं बल्कि ज्ञानी का तबक़ा ऊपर से नीचे तक है। और शान्त या सुखी ख़्वाह साकिन का तबक़ा आँखों से ऊंचे के मुकायात तक है और उसकी नज़र नीचे तक बिलकुल नहीं रहती। वह ऊंचे तबक़ात में जमकर बैठ रहता है। इतना फ़र्क़ है कि इस हालत में वह मदारइलह आधार अधिष्ठान बना हुआ नीचे के हिस्सों को तबकियत देता रहता है। यह उसके सहारे रहते हैं। वह उनके सहारे नहीं रहता।

निचले तबके में यह दिल मूढ़ गति (ला इल्मी की हालत) में रहता है। निचले तबक़े में चंचल रहता है और इसी चंचल पने के अन्दर तरक़्क़ी करने से उसमें अज्ञानी और ज्ञानी के औसाफ़ पैदा हो जाते हैं और ऊंचे तबक़े में आकर यह मन स्थित क़ायम साकिन और शान्त हो जाता है। इस वक्त इसको न कोई मूढ़ कह सकता है, न चंचल, न अज्ञानी, न ज्ञानी। यह हालतें उसी पर सिर्फ तीन घात या तवकात पर बैठने से आजाती हैं। यह उनके असर को क़बूल कर लेता है।

मूढ़ बे हरकत को नहीं कहते बल्कि सुस्त बे अक्ल, बे तमीज़, निर्बुद्धि और निर्वीक को कहते हैं जो कर्म करता है लेकिन न उसको जानता है और न नतीज़े से बाक़िफ़ है, न बोल सकता है। जगत के काम का अलबत्ता मूढ़ बहुत वसीय दायरा रखता है।

चंचल मुतहर्रिक को कहते हैं जो अज़तराव बेचैनी पसोपेश उधर-इधर,अगर -मगर, लेकिल -बिलेकित में पड़ा रहता है। इसमें मूढ़ता तो है लेकिन इस मूढ़ता में ऐसी हालत आगयी है कि वह हिचकिचाता रहता है, कतई फैसला करने की ताक़त इसमें नहीं है। मूढ़ तो बिला पसोपेश कार्य करता है। चंचल में पसोपेश रहता है। यह इनके दरमियान का फ़र्क़ है। फिर भी चंचल पसोपेश की आदत की ज़ियादती से अज्ञानी हो जाता है।

इस नीचे तबके के ऐमाल का काफी तज़ुर्बा हो गया और कुछ ताक़त आगयी है और इस क़दर जानता है कि दुनियां में फलाँ काम का यह नतीज़ा होता है और यही ख्याल उसे जजा व सज़ा के अधिकार बख्शता है और जब वह जजा और सज़ा को भोगते-भोगते कार्य में जाता है तो फिर उसमें ज्ञान की फूटना शुरू होती है। इस ज्ञान की मदद से वह निचले, दर्मियानी और ऊँचे तवकात की सैर करते हुए उनके कर्मों के नतीज़े के इल्म पर क़ादिर होता है और एतदाल का रास्ता इखित्यार करके अपने आपको संभाल लेता है।

शान्त और साकिन ठहरे हुए को कहते हैं। शान्त नाम है लतीफ़ शुदा जौहर का। इसका माद्दा ' शम ' है जिसका मतलब ही सकून है। यह इस दिल या मन की उल्वी हालत है। मसलन तुम खाना खाते हो। अगर मूढ़ हो तो हैवान की तरह खाने पर गिरे रहोगे और अंजाम की तरफ से बेखबर होगे। जैसा कि कुत्ते और बिल्ली का हाल होता है, लेकिन इन्सानियत की हालत में यह कैफियत न होगी। तुम लज़्ज़त लेते हुए खाने की हालत का इल्म रखोगे। यह इल्म जियादातर जवान, दांत, हलक तक ही महदूद है। हलक के नीचे उतरते ही फिर इल्म नहीं रहता। यह इल्म दर्मियानी दिल का खास्सा है जो इल्म ने इल्म की मिली हुई गिराह है। इसको जड़ व चेतन की ग्रंथि कहते हैं। अब तुम मूढ़ तबके की तरफ ध्यान दो। खाना खा लिया गया, वह मेदे में आगया। मेदा उसे गूढ़ कर्म यानी बेइल्मी के कानून के जैर असर हज़म करता है। चरबी, खून, धातु, बीज वगैरह में तब्दील करता हुआ एड़ी से चोटी तक पहुंचाता रहता है। लेकिन न कोई बता सकता है और न कोई जानता है कि यह तमाम काम कैसे होता है।। हालांकि काम तुम्हारा सिफ़ली दिल और तुम ही किया करते हो और कोई नहीं करता लेकिन बेखबरी और बे इल्मी रहती है। इसका नाम मूढ़ गति है। मूढ़ कर्म और मूढ़ चाल है। यह बसीअ रकबा घेरता है। दर्मियानी और दिली तबके की नीति कुछ तो मैं पहिले सुना चुका हूँ। ऐसे खाने की लज़्ज़त, मज़ा और कसरत का इल्म महदूद है। यह इसकी पहिली हालत है फिर वह उसे बढ़ाकर अज्ञानी होता

है जिस हालत में वह अपनी जिस्मानी यानी स्थूल देह के हालात और बाक़यात से तो ख़बर रखता है। यह तजबीज की बसअत की बजह से तरक़्क़ी कर जाता है तो ज्ञानी हो जाता है और समझ बूझ बढ़ जाती है ताहम इस क़दर बसीअ नहीं होता है और शांति और सकून की हालत में छेड़ देने से इसमें रोशन ज़मीरी आती है और बेखबरी तक की ख़बर दे सकता है। यह मन की तीन सूरतें सिर्फ उसकी मुतअद्दिद बैठक और मुक़ाम के असर की वजह है जिसे तुम मन के घाट कहते हो।

रोशन ज़मीरी तो ज्ञानी का ही हिस्सा है। सिवाय ज्ञानी के और किसी को रोशन ज़मीरी कहा ही नहीं जा सकता। लेकिन वह ज्ञानी है जिसकी ज़्यादा बैठक रूह या कारण शरीर में है जो अल्तफ़ है। इसी को शास्त्र तुर्या कहते हैं।

तुर्या का असली मतलब कमतर लोग जानते हैं। यह संस्कृत ज़बान के मशहूर लफ्ज़ चतुर से निकला है जिसके मानी है चौथा। लफ्ज़ से तो सब वाकिफ़ हैं लेकिन मुराद से बहरा हैं। यह तुर्या चौथा पद है जो सत (हस्ती) चित्र (इल्म) और आनंद व सकून और सुख से ऊंचा है।

इस वक्त तक दिल के तीन मुक़ाम और बैठक बतलाये गए हैं लेकिन चौथे मुक़ाम का ज़िक्र आगे आएगा। यह सत, चित्त,आनन्द भी जिस्मानी है। सत (हस्ती) यह स्थूल देह और कसीफ़ जिस्म है जो नज़र आवे और जिसके नज़र आने से उसकी हस्ती का इल्म हो। जो अपनी हस्ती का देखने, सुनने, सूंघने, चखने, और छूने से इज़हार कर सके। जिसको देखने वाले, सुनने वाले, सूंघने वाले, छूने वाले और चखने वाले को उसकी हस्ती का इल्म हवास के ज़रिये से हो। जिसके हैपना (अस्वात) के लिए सिवाय उसकी हस्ती के किसी क़िस्म की दलील या हुज्जत की ज़रूरत न रहे, वह सत और हस्ती ही है।

अब सोचो कि यह तुम्हारे स्थूल देह ही की बाबत है या नहीं। अगर है और उसके होने को तुम मान रहे हो तो फिर उसकी सत्ता या हस्ती के मानने से मुन्किर होता यह प्रमाण सिद्ध यानी हबास इल्म से सिद्ध है या साबित है। चित्त (दिल) सूक्ष्म शरीर और लतीफ़ बातिनी जिस्म है जो सोचा जाने, सोचने में आवे, सोच-विचार से समझा जावे, जो अपनी समझ-बूझ, ग़ौर, फ़िक्र, जिस ख़्याल और विवेक से, विचार से, अपने ज्ञान की हालत का इज़हार करे। जिसकी तरकीब ईजादी, तराश, ख़राश, अक़्ली तदबीर जाहिनी इप्राक और दिली उरूज से सोचने वाले अहिल दिल, अहिल ख़्याल और अहिल अक्ल पर अपनी जहानत का सिक्का बैठा सके। जो अक्ल रहा फ़हम ज़का और तमीजोसरा दानिशमन्दी और दूरबीनी से अपना इज़हार करता हो।

वह दिल यानी ज़िस्मानी काबिलियत के सिवा और क्या होगा। इस दिल के वज़ूद से इन्कार करना अनुमान सिद्ध है यानी क़यासी, ख्याली, और अक़्ली इल्म से साबित है। आनन्द (रूह) कारण शरीर अल्तफ़ और बातिन का बातिनी जिस्म है। यह आनन्द संस्कृत माद्दा (नदी) खुश होने या खुश करने से बना है। जिसके मेल से सुख पैदा हो, जिसमें दुःख का नाम निशान तक न रहे। जो मुहताज़ग़ी अफ़लास कमी और नुक्स के ऐबों से पाक हो वह आनन्द है। ऐसे आनन्द के कारण शरीर के सिवा और क्या कहा जायेगा। इसका सुख रूप होना शब्द सिद्ध है यानी शहादत से इसका इल्म खुद अपने आपको होता है।

अब सबाल यह है कि शहादत किसकी। जबाब यह है कि अपने आप लफ्ज़ से शहादत हो इसके सिवा और किसी की गवाही कैसी ?

तुम कसीफ़ जिस्म और स्थूल देह रखते हो। यह तुम्हारी हस्ती के इज़हार-इक़रार का ज़रिया है। तुम भी इसको जानते हो कि यह जिस्म न होता तो न तो तुमको अपना इल्म होता और न औरों को तुम्हारी हस्ती का इल्म होता।

इति हरि ॐ

स्थूल देह का खास्सा है कि मूढ़ता के साथ कर्म बनें। सूक्ष्म शरीर यानी दिली हालत या दिल का खास्सा, कर्म, अज्ञान, ज्ञान, और इसके ऊंची अवस्था में सिर्फ ज्ञान है। कारण शरीर का खास्सा सकून, करार और शान्ति है और सकून और शान्ति सुख है। और जब दिल उसके घाट पर बैठता है तो उसके रूप का होकर साकिन और शान्त हो जाता है।

उसके इस बैठने का नाम उपासना है। दिल रूह के साथ भी बर्ताव करता है और व्यवहार करता है। जो किसी भ्रम की वजह से पर्याप्त (हासिल शुदा) शै को अपर्याप्त (गैर हसिलशुदा) मानकर उसकी प्राप्ति (हुसूल) के ख़्याल में गलता-पेंचा रहता है। उसको ज़रूर ही शमल और अमल के मरहले करने पड़ेंगे। और जो प्राप्त वस्तु को प्राप्त जानता है उसे इसकी क्या ज़रूरत है। हाथ के कलाई कंगन का ऊपर की तरफ खिसक जाना और चोरी होने का शुबह होना। ऐसे ही तलाश और जुस्तजू को अमल और शग़ल कहते हैं। भर्मे हुए को अमल और शग़ल की ज़रूरत है।

क़रीब बैठने वाला और आसन लगाने वाला मन ही है। मन जिस पर बैठता है उसका फ़ौरन रूप इखितयार कर लेता है। स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर पर क्या मौक़ूफ़ है। मन, हाथ, पांव, आँख, नाक, कान

वगैरह सब ही इसकी बैठक हैं। यह सब पर आसन जमाता है और सब ही की उपासना करता है। जितनी बाहिरी चीज़ें और बाहिरी नज़ारे हैं उन सब पर मन ही मन अपनी वृति (धार) द्वारा बैठता है और उनके तीन तरह के लुफ्त उठता है।

'

अन्तिम प्रवचन नं. ३

यह सच है कि जागृत यानी जागने की हालत या जिस्मानी तबके में हस्ती, अक़्ल और सरूर तीनों ही हस्ती और उनके गुथे रहने का ज्ञान होता है। इसकी वजह से (१) कोई मखलूक ऐसी नहीं है जो हर सह अजसाम का मजमूआ न हो। दिल बीच में रहता हुआ ऊपर नीचे और अपने तबके के असरात को लिए हुए काम करता है और यह इसका खास्सा है। (२) यह देखा जाता है कि साँस आती है, साँस जाती है और साँस ठहरा करती है। यह रेचक-पूरक और कुम्भक है जो हर वक्त और हर हालत में हुआ करते हैं। इसका सबब तीनों जिस्मों का गोठाव है। यह न समझना चाहिए कि स्वप्न में जागृत नहीं या जागृत में सुबुद्धि नहीं या सुबुद्धि में जागृत या स्वप्न नहीं है - लेकिन इसका इल्म हर शख्स को नहीं होता। सिर्फ रूहानी नज़र से तरक़्क़ीयाफ्ता मुतनफ़िफ़स इसको समझ सकते हैं।

दिल ज़ियादातर ख़याली उधेड़बुन ही के लिए है और रूह ज़ियादातर सुख व शांति के लिए। इन तीनों में तीनों ही के गुथे हुए रहने में भी सबब है कि हर तबक़े में कर्म, ज्ञान और आनन्द साथ २ चलते हैं। हाँ, ख़सूसियत और ज़ियादती के नुक़ते निगाह से वह जुदा-जुदा प्रतीत होते हैं। मसलन आँख के सामने दिल की धार आँख के ज़रिये निकली तो इसको इस तरह घेर लिया जिस तरह नहर का पानी नहर से निकलकर क्यारी को जाकर उसी की सूरत इखितयार कर लेता है।

कर्म, ज्ञान, और आनन्द जो सच्चिदानंद के औसाफ़ हैं , हर जगह साथ-साथ चलते हैं। व्यवहार-ख्याल और परमार्थ में तीनों का इकसानियत है। यहाँ तक कि यही उसूल औरत और मर्द के व्यवहारी सूरत में मौज़ूद है। कर्म की उपासना में इब्तदाई और मूढ़ता की हरकत है। इस बैठक पर मन देर तक नहीं बैठ सकता। ज्ञान की उपासना में ऊपर नीचे के सोच विचार की हरकत है। यहाँ भी आसन खूब नहीं जमता। आखिरी हालत में मज़बूती के साथ आसन जमता है, इसलिए उसमें सुख होता है। इस वजह से इस सुख की हालत को फ़ौक़ियत दी गयी है। किसी की बातों को सुनना कर्म है, बातों को विचार करके एतराज़ और सबाल पैदा करना ज्ञान है और उन बातों को जौहर या खुलासे पर ठहरने का नाम उपासना है जो आनन्द देने वाली है। इस का नाम शास्त्रों ने श्रवण-मनन और निध्यासन दिया है। निध्यासन का लगवी मतलब तो ध्यान में आरूढ़ होना है। नि (पहिले) धि (ध्यान) आसन (बैठक) से बना है। ज्ञान प्रकाश ज़रूर है लेकिन बतौर खुद मक़सद नहीं है बल्कि

मक़सद के तकमील के ज़रिये कहे जाते हैं। हम रात के वक्त चिराग़ को चिराग़ की खातिर रोशन नहीं करते बल्कि चिराग़ की रौशनी में कुछ काम करते हैं जो मक़सद होता है। इसलिए हमारे ज्ञान का भी कुछ मक़सद है वह बतौर ख़ुद मक़सद नहीं है।

शंका - अबतक यह ही सुनते चले आये हैं कि ज्ञान ही मक़सद है और वेदान्त भी कहता है कि नहीं मालूम उपासना को आनन्द क्यों कहा जाता है क्योंकि क़ुरबत और हम नशिसनी की भी तो कोई मक़सद या गर्ज़ होनी चाहिए। इसलिए हमारे ज्ञान का भी कुछ मक़सद या गर्ज़ होनी चाहिए। इसलिए अगर मक़सद है तो ज्ञान ही हो सकता है।

उत्तर - सच्चिदानंद में सिर्फ तीन लफ्ज़ हैं - सत, चित, आनन्द। सत कर्म है, चित्त ज्ञान है और आनन्द आखिरी हालत है। लेकिन अगर उपासना को आनन्द माना जाये तो फिर सच्चिदानंद की इस्तलाह में कोई और लफ्ज़ भी शामिल करना चाहिए ताकि मक़सद की वजाहत हो जावे। लेकिन ऐसा करने से क़दीम इस्तलाह ग़लत और नाक़िस ठहरेगी और फिर उसे चौथे लफ्ज़ की फिर कोई गरज़ जानने पड़ेगी और सिलसिला और मक़तूअ (आम अवस्था वृत्ति) का नुक्स हो जावेगा और फिर अस्लियत तक रसाई मुहाल होगी। अगर मैं अपनी बारी पर यह कहूँ की ज्ञान की गरज़ क्या है, अस्लियत तक रसाई की क्या गरज़ और अलाहाजुलक्यास :--

उपासना सोहबत का संग मिलाप है। यह मिलाप की गर्ज़ है। और यह आनन्द ख़ुशी और सरूर है। वेदान्त का मक़सद समझने की यहाँ ज़रूरत है। वेद (ज्ञान) का अन्त, इन्तहा, ख़ुशी और आनन्द है। शास्त्र कहते हैं कि दुखों का कतई ख़ात्मा और सबसे बड़े सुख का हासिल करना इन्सानी मक़सद है। इससे साबित है कि वेद ज्ञान बतौर ख़ुद मक़सद नहीं है बल्कि उस वेद ज्ञान का अन्त या मक़सद सिर्फ राहत है, ख़ुशी, सरूर, सुख व आनन्द है।

कर्म में भी ख़ुशी है लेकिन खुसी-ख़ुशी में फ़र्क़ होता है। आनन्द में भेद है। इस लतीफ़ ख्याल को ज़हन में रखकर परमानन्द (सरूर अज़ीम या बड़ी ख़ुशी) का लफ्ज़ स्तैमाल किया गया है और वह परमानन्द मिलाप विशाल हम आग़ोशी है जै में मज़ाज़ी, मुरादी और स्तलाही महावरह में कहना चला आया है। यह लफ्ज़ बेशक मिलाप के मानी में बखूबी स्तैमाल हो सकता था लेकिन इसका मुरादी और स्तलाही मानी अमल शग़ल हैं। इसलिए इसको स्तैमाल नहीं किया गया, सिर्फ उपासना ही को काफ़ी समझा गया। यह आनन्द परमानन्द

उपासना है बशर्ते कि इसकी अस्लियत और असली मुराद हासिल करली जाये। इस वजह से उपासना को ज्ञान, फौक़ और तर्जीह है।

अब तक ऐसा समझ में आया है किआत्मा ही सिर्फ मुहात है लेकिन इस आत्मा की बाबत साबित हुआ है कि यह पिण्डी मन है यानी जिस्मानी दिल है। इसके दो बस्फ हैं अतः हरकत करना, मन, सोचना। इन बसफों के होने की वजह से, मन ही और राग द्वेष, इच्छा, सुख, ज्ञान और प्रयत्न वगैरह इसकी खसूसियत है।

ब्रह्म = ब्र (बड़ा) + हम (ह्म्म) मनन यानी सोचना। इसलिए यह ब्रह्माण्डी मन है। इसलिए यह भी जिस्मानियत, जिस्म गिलाफ़ महज़ है। संस्कृत जबान में जिस्म को देह कहते हैं। देह (दह) लफ्ज़ से निकला है जिसके मानी इकठ्ठा हुआ, जमा हुआ है। तीनों जिस्म जिस्म स्थूल परमाणुओं का तरकीबी मज़मूआ है जो बाहर है। सूक्ष्म देह सूक्ष्म परमाणुओं का तरकीबी मज़मूआ है जो अन्तर या अन्दर है। इसी को रूह कहा जाता है। रूह इतर जौहर खुलासे का नाम है। लोगों का ख्याल चूँकी इन्हीं तीनो तक महदूद है और वह उनको भी ज्यों का त्यों नहीं समझते और भ्रम दूर नहीं होता इस वजह से बार-बार इन्हीं की तशरीह की जाती है।

ऋषि मुनि नेति-नेति कहते हैं। वह न यह है, न यह वह है। यह नेति का तजुर्मा है। इसके बाद जो कुछ कहा जाता है वह इशारा महज़ है लेकिन इशारे की समझ शाज लोगों को होती है। जिन बातों की निस्बत लोगों को आखिरी कुरेद है या जिनको दिल ढूंढ़ता है इसकी मुराद न ईश्वर है और न ब्रह्म है और न पारब्रह्म है नेति नेति नेति।

इसकी निस्बत क्या जवान खोली जाये जब कि दिल और अक्ल से भी उसका इज़हार नहीं किया जा सकता है। यह सन्तों का चौथा पद है, कहने-सुनने के लिए यह तुर्या है। आम तौर पर लोग कारण शरीर, उपासना भेद और सुख के रहस्य (रमज़) को नहीं समझते हैं। इसलिए इस ही की निस्बत सबालात के सिलसिले को जारी रखते हैं या जारी रखने की ज़रूरत रहती है।

आँख सबको देखती है, अपने आपको नहीं देखती। नाक सबको सूंघती है, अपने आप को नहीं सूंघती। कान सबको सुनते हैं, अपने आपको नहीं सुनते। तुम सबको देखते हो, अपने आपको नहीं देखते। इस अज्ञान को दूर करने के लिए मसनूई आइना की मदद लेनी पड़ती है।

जो तुम ले रहे हो, हो चुकी है। आहिस्ता २ आइना के अन्दर जब अपना अक्स देखोगे और देख लोगो तब मुत्यैतन होकर खामोश हो रहोगे और गुफ्तगूं का सिलसिला बंद हो जायेगा।

वग़ैर उल्टी चाल इख़्तियार किये हुए इसका अनुभव नहीं होता। वह आधार महज़ है।

यहाँ मैं और तुम सब जहाँ तक ज़ाहिरा नज़र आते हैं जिस्म परस्त ही दिखलाई देते हैं। इस वजह से आत्मा, ब्रह्म, रूह, वग़ैरह को जिस्म कहकर समझाने की कोशिश की जाती है।

यह सब दरअसल जिस्म भी नहीं हैं। चाहे स्थूल हो या सूक्ष्म या कारण हो। तीनों जिस्मानियत के विल तरकीन नाम हैं। नाम और रूप खुद जिस्म हैं निराकार, साकार जिस्मानियत हैं। निर्गुण और सगुण जिस्म ही हैं। नेति-नेति।

ज्ञान, उपासना, सुख, (मुस्लसल)

जबतक इंसान किसी शै की माहियत असर और क़ायदे से वाक़िफ़ नहीं होता तबतक न उसे इत्मीनान होता है न उस पर क़ायम होता है और जबतक क़ायम नहीं होता है तबतक उसे राहत और सरूर नहीं मिलता।

तमाम ख़ुशी का राज़ सिर्फ चित्त की वृत्ति के ठहराव और सकून का नतीज़ा है। इन्सान नादानिश्ता कुदरती और फ़ितरती है। मैलान तबई के ज़ेर असर चित्त की वृत्ति को ठहराता हुआ सुख, सकून और राहत का वारिस हुआ करता है।

क्योंकि नज़ाम क़ुदरत के कानून (सृष्टि कर्म) में ऐसा ही इहत्माम है और इसी पर खेल हुआ करता है। कहीं ज्ञान या मार्फत की अहिमियत पर जो इस क़दर ज़ोर दिया गया है उसकी गर्ज़ का तअल्लुक़ क़ैद और नजाद के मस्ले से है वर्ना जो कुछ हुआ होरहा है या होगा वह योंही अपने सिलसिले में जारी रहता है। अब सबाल यह होता है कि फिर ज्ञान की क्या अजमत रही। जो खुद बखुद ही हुआ करता है तो फिर जानने की ख्वाहिश, जानने की कोशिश और ख्वाहिश की क्या ज़रूरत बाक़ी रही ? जबाब यह है कि जिसे हम जानना, जानने की ख्वाहिश और जानने की कोशिश करना कहते हैं - वह भी तो सृष्टि-कर्म (नज़ाम क़ुदरत) में मौजूद है। इससे बचाव कब है, वह तो यों ही होता रहेगा। फिर सबाल पैदा होता है कि हम फ़िक्र क्यों करें, जबकि हमारे किये हुए वग़ैर एक काम खुद ब खुद होता है तब वह लाहासिल है।

इसका जबाब यह है कि न फ़िक्र बहुत अच्छा है। अगर बेफिक्री रही तो इससे अच्छी बेहतर और क्या बात हो सकती है। लेकिन जिसको हम फ़िक्र कहते हैं वह दिल की कुरेद है और कुरेद वातिनी ख्वाहिश के ज़ेर असर पैदा हुआ करती है और जब तक कि ख्वाहिश पूरी नहीं हो लेती, तब तक यह अपना काम करती रहती

है। उसी ख्वाहिश को संस्कृत ज़बान में वासना कहते हैं। इसी से इंसानी दुनियाँ का ज़हूर होता है और जब तक यह ख्वाहिश है - ख्वाहिश में तब्दील नहीं हो लेती, तब तक शान्ति नहीं आती। ख्वाहिश का ही ख्वाहिश में तब्दील होना - क़रार, उपासना और ठहराव है। यह या तो ज्ञान से पैदा होती है या शै मतलूब के तकमील तहसील और उसके सिलसिले में बेहतरी की सूरत में होकर क़रार का वायस हो जाती है। इस वजह से ज्ञानियों के ज्ञान की अज़मत का राग ज़ोर और शोर के साथ अलापा है और वह लफ़्ज़ ब लफ़्ज़ सही है। जब तक ज्ञान नहीं होता - तमीज़ और स्तकलाल की कमी रहती है - और यह मालूम भी है कि दुविधा और पसोपेश में पड़े रहने वाले इंसान में किस क़दर बेचैनी रहती है। दूसरी बात यह है कि क़ुदरत में हमेशा हालत एकसां नहीं रहती। इसका उत्थान हुआ करता है। उत्थान बाज़गश्त यानी बार-बार वापिसी को कहते हैं। सिमटाव के साथ उत्थान बराबर हुआ करता है - होता रहता है। जेसे जागृत का सिमटाव स्वप्न में और स्वप्न का सिमटाव सुषुप्ति में कुदरतन होता रहता है - फिर सुषुप्ति से स्वप्न ख्व्वाह जागृत में उत्थान होता है। यह रोज़-रोज़ का मामूल है। इसी का नाम काल-चक्र है।

सेरी और बेख़्वाहिशी क़रीब-क़रीब एक ही हैसियत रखने वाले हैं। ख्वाहिश की सेरी को भोग बेख़्वाहिश को योग कह सकते हैं। जो योग है वह भोग भी है। भोग लज़्ज़त लेने को कहते हैं और योग रूप के मिलाव का नाम है।

कर्म और ज्ञान दोनों इन्तहा में एकसां हो जाते हैं। कर्म से हज़ारों कर्म पैदा होते हैं और इब्तदा में ख्वाहिश के पेट से अनगिनत ख्वाहिशें निकलती रहती हैं।

इनके सिलसिले में वगैर समझे-बूझे पड़ा रहना अंधकार है और जब कर्म करते -करते और ख्वाह उठते-उठते तजर्बा बसौअ हो जाता है - दिल की सफाई हो रहती है। तब ज्ञान की हालत आ जाती है और तमीज़ जागती है - तब रौशनी व प्रकाश का मौका हाथ आता है और बेख़्वाहिश में क़रार आ जाता है। कर्म (पूर्व) पहिला मरहला और ज्ञान (उत्तर) पिछला मरहिला है।

बिला सोचे समझे गुफ़्तगू का सिलसिला पहिला मरहिला है उसको मीमांसा कहते हैं। मीमांसा दो

हैं -एक पूर्व मीमांसा

सेहत और तन्दरुस्ती के वक्त चित्त या तवज्जुह की वृत्ति नस और नाड़ियों के जरिये से आती-जाती हुई जिस्म के तबके पर ठहरा करती है सुख रहता है।

अगर कोई जख्म आजाये, रग कट जाये, खून निकलने लग जाए तो इन हादिसों की वजह से आई हुई वृत्ति की धार को ठहरने का मौक़ा न मिलेगा। और आ-आ कर उसी ज़ख्म की वजह से दुःख होना लाज़िमी है। सेहत की हालत में वृत्ति का ठहराव होता रहता है, जिसकी वजह से सुख है। बीमारी की हालत में हटाव होता है इसी सबब से दुःख रहता है। अगर चित्त की वृत्ति की धार के ठहरने का अपना काम करता रहता है तो सुख है। अगर नहीं हुई, बदहज़मी हुई वृत्ति को मज़बूरन हटाया तो फिर दुःख दर्द ही वहां होगा। इसी तरह तमाम बीमारियों के मुताल्लिक समझ लो। ज़ख्म रसीदा हिस्से पर दवा के मल देने से दो कैफ़ियतें होंगीं या तो नस नाड़ी का सिलसिला जारी हो जायेगा और वृत्ति की आमदरफ़्त में फिर ख़लल न होगा या वहहिस्सा खराव हो जायेगा और वृत्ति का हटना मौक़ूफ़ हो जायेगा, इस वजह से दुःख जाता रहेगा। जब कोई हमदर्द दोस्त, हकीम, गुरु या अज़ीज़ रिश्तेदार मरीज़ के पास आ बैठता है तो मरीज़ के चित्त की वृत्ति की धार उस दवा के ज़ेरे असर या ज़िस्म के सिफली तबके को छोड़कर दिमाग़ की तरफ चली आती है और वहां नादानिशक कुदरती उसूल के मुवाफिक अपना मरकज़ बना लेती है, फिर दर्द बंद होने लगता है।

जब कोई शख्श किसी ऊंची इमारत से गिरने के बायस करनूड़ लेता है तो सदमे के ज़र असर चित्त की धार नीचे के हिस्से को बिलकुल छोड़ देती है और दिमाग़ में जाकर आसन जमा लेती है। वहां भी यही राज काम करता है। सुख बाहर तो कभी भी नहीं है। वह हमारी तवज्जुह के लगाव और चित्त की वृत्ति के ठहराव और सुरत के सिमटाव में है। जो इस राज को जानते हैं उनको बाहर सुख तलाश करने की क्या हाजत है। कोई शख्श अपने दिल को मरकत बनाकर वहां किसी खास ख्याल को जहन में लिए हुए सोच रहा है और नतीजे को समझ-समझ कर ख़ुशी में महव हो रहा है। चाहे यह ख्याल इल्म रियाज़ का सस्ला या नजूम का दफ़ीना या फिलसफे का सवाल हो। ख़्वाह कोई और ही ख्याल हो वहां भी उसको सुख रहता है और महिवियत हो जाती है। अगर और शख्स उसको छेड़े और वृत्ति हट जाये तब दुःख होगा।

चित्त की वृत्ति की धार और तवज्जुह की एकसूई के सिवा रूहानी तबके में और कोई दूसरा उसूल यहां काम नहीं करता। रूहानी सुख और कुछ नहीं है वह सिर्फ सकून और क़रार और शांति है।

तीन तरह के सुख-दुःख

(१) भूत कहते हैं अंसर या तत्व को। इन्हीं अनासिर या तत्वों से मख्लूक़ बनी है। ख़्वाह वह ज़मीनी है या

आसमानी है सब अधिभौतिक कहलाते हैं। इनके मेल से या वृत्ति के आने पर क़ायम होने से जो सुख होता है वह अधिभौतिक सुख है। ख़्वाह वह लतीफ अंसर हों या कसीफ़ हों और इनसे वृत्ति के ज़बरदस्ती हटाए जाने से दुःख होता है। जो अधिभौतिक यानी अंसरी दुःख हैं। शब्द स्पर्श , रूप, रस, गंध , लतीफ अंसर हैं। आकाश, हवा, आग, पानी, जमीन, कसीफ़ अंसर हैं।

जो मख़लूक़ इन सबसे बनी हुई है वह सबकी सब अधिभौतिक है।

(२) देव कहते हैं कारण तत्व को जो लतीफ़ और कसीफ़ के बीच में है। संस्कृत जवान में इस लफ्ज़ के बेशुमार माने हैं। मसलन देवता, राजा, देवर, बेवकूफ, लड़का, पेशा और भला बरछी, खेल, ब्राह्मण और कायस्थ का ख़िताब -इन्द्रि, देवी, दुर्गा, रानी, आला दर्ज़े की औरत का ख़िताब, पूजा, ताज़ीम, वगैरह -वगैरह।

यह सब मजाजी मानी हैं, हक़ीक़ी सिर्फ 'खेल' के हैं। संस्कृत माद्दा से (खेलना) धमकाना।

यहां उसको कारण के मानी दिए जाते हैं। दो पना है और सब में उसका खेल और चमक है। यह सकून और शांती की कैफियत है जिससे रूह की मुराद समझी जाती है। वृत्ति के इस कारण अवस्था में क़ायम होने से जो सुख होता है और जो वृत्ति के इस हालत से हटने से जो दुःख होता है अधिदैनिक कहलाता है और लोग सूरज, चाँद, बिजली, गर्ज़ वग़ैरह के दुःख को अधिदैनिक दुःख बोलते हैं जो ग़लत है क्योंकि यह सब अधिभौतिक है।

समाप्तम

मेरी समझ में आत्मा सिर्फ़ मन को कहते हैं क्योंकि मन ही में हरकत और ग़ौर है।

इति शुभम ।